कमाल इन्सानी

या

मानव जीवन की उच्चशिक्षा

लेखक
समर्थ गुरू श्री महात्मा रामचन्द्र जी

कमाल इन्सानी

लेखक

समर्थ सद्गुरु परमसंत
महात्मा श्री रामचन्द्र जी

https://harnarayan-saxena.com/books%2C-video-and-audio

Digital Edition (18j13): 13 Oct 2018

समर्थ सद्गुरु परमसंत

महात्मा श्री रामचन्द्र जी

फतेहगढ़ (उ० प्र०)

जन्म: 2 फरवरी 1873 निर्वाण: 14 अगस्त 1931

कमाल इन्सानी

मानव जीवन की उच्च शिखा

“कमाल इन्सानी इसी में है कि फना-फिल्लाह की सरहद में पहुंच कर बका-बिल्लाह में बाकी रहे”

अर्थात - आदमी की जिन्दगी का उद्देश्य यह है कि ईश्वर में लय हो जावे और फिर वहाँ पहुंच कर उस जगह स्थिति कर ले यही उसका कमाल है और यह ही आदर्श या आइडियल है। जब रास्ता तै करके सरहद में पहुंचता है तो सालोक्यता और सामीप्यता कहते हैं। यह फनाहियत की सरहद में पहुंचना है - सारुप्यता को बका कहते हैं और सायुज्यता को बका दर बका या बका बिल बका कहते हैं। इस सब को देखते भालते हुए रास्ते को तय कर जाना सैर कहते हैं।

“पस सैर अव्वल (प्रथम) सैर इलल्लिाह (अद्वैत) है और सैर सानी सैर (द्वितीय) फ़ीअल्लाह (सामीप्य) है और इन्तहाई कमाल पहिली सैर में है दूसरी में नहीं। वस्ल (मिलन) से मुराद यह है कि सिवाय परमात्मा के दूसरी सब चीजों से किता तअल्लुक (त्याग) कर लेना है और तमाम मखलूकात की तरफ तवज्जुह न करना - इबादत में कोशिश करना - बेरंगी महज और इतलाक सिर्फ में फना होना।“

अर्थात - यह मिलाप और योग है कि पहिले सब से वैराग हो जावे और जो कुछ दुनियाँ में मौजूद है उस की तरफ से मुँह मोड़ लेना, उपासना में ऐसी और इस हालत पर आ जाना कि जहाँ रंग रूप और

नाम न हो, और उस जगह लय हो जाना जो सब का आधार है और खुद किसी का आधार न हो बल्कि अपना आप आधार हो।"

"इसका पहिला दर्जा बेखुदी है और तमाम हवास से गीबत है जो मौत के मुशाबह है, मगर मौत में हुज़ूरी नहीं है और इस में हुज़ूरी ही हुज़ूरी है।"

अर्थात - इस लय अवस्था का पहिला दर्जा अपने आप से गुम हो जाना है और इसमें सब इन्द्रियों का मुअत्तल हो जाना है, इन्द्रियों से इस तरह बेकार हो जाना मौत के मानिन्द हो जाता है लेकिन मौत में और ऐसी लय अवस्था के दरमियान यह फर्क है कि मौत में तो कोई शै या चीज अपने सामने नहीं रहती है लेकिन ऐसी फना में बिल्कुल हाजिरी है यानी ऐसी बेखुदी हो जावे कि सिर्फ एक लक्ष्य जो सामने है वह ही बाकी रह जावे बाकी दूसरी चीजों के लिए मुर्दा की सी कैफियत हो जावे इसको हुज़ूरी कहते हैं।

"जब सालिक इस सरहद में पहुंचता है तो यह विलायत के दायरे में आता है गो उसकी यह हालत एक साअत ही के लिए हो।"

अर्थात - अगर अभ्यासी और पंथाई को ऐसी हालत होने लग जावे जैसी कि ऊपर बयान की गई है, चाहे वह थोड़े ही वक्त के लिए हो - तो उसका संबंध विराट देश से हो जाता है, जहाँ कि सब तत्वों, सब शक्तियों का भंडार हैं - ऐसे अभ्यासी और साधु को मुसल्मानी तसव्वुफ़ में वली कहते हैं।

"अगर यह वली दुरुस्त हालत पर हो तो उसको

असहाब तमकीन कहते हैं - और अगर वह हालत कभी जल्द पैदा हो जावे और कभी देर में और फिर वह उसी बेखुदी और शुक्र में रहे तो उसको अस्बाब तलवीन कहते हैं।"

अर्थात - जब विराट देश और रूप से सम्बन्ध रखता हुआ साधु और अभ्यासी की ऐसी हालत हो जाय कि थोड़े दिन उसको खूब आनन्द आता रहे और तबीयत लगी रहे और जज़बाती हालत रहे और शरीर गद-गद रहे और बिला इरादे के भी तबीयत एक ही तरफ झुकी रहे और अपने जिस्म की याद भूला रहे जैसा कि थोड़ा नशा पीकर हालत रहती है और फिर थोड़ी देर के बाद या थोड़े वक्त और दिनों के बाद वह हालत जाती रहा करे और आनन्द न आवे तबीयत ठस रहे ख़यालता का हुजूम हर वक्त रहे तबीयत में परेशानी फिक्र और भारी पन रहे और बार-बार जोर लगाने पर भी तबीयत का झुकाव व लगाव न पैदा हो तो ऐसे साधु को साहबे तलवीन कहते हैं जिसको कब्ज और वस्तु होता रहता है और एक तरह की हालत कायम नहीं रहती है हमेशा और हर वक्त बदलती रहती है पस जब तक पन्थाई की यह हालत रहे उसको स्थिति नसीब नहीं होती। इसके बर खिलाफ अगर सालिक को हमेशा कब्ज हो या बस्त हो एक हालत पर रहता है, और किसी हालत में घबराता नहीं है तो उसको साहबे तमकीन कहते हैं यानी मकान पाया हुआ या स्थित प्रज्ञ।

अगर सालिक ऐसी बे ख़ुदी में फंस गया है कि उसको होश नहीं आता है और हमेशा नशा की सी हालत में रहता है तो यह भी साहब तमकीन नहीं है। साहब तमकीन तो वह है कि हर हालत में होश रखता है और कभी बेचैन और बेकरार नहीं होता है।

जो साधु कि प्राणायामी है, प्रत्याहारी है या धारणा ध्यान और समाधि वाला है यदि उसको हालत जज़्ब की पैदा नहीं हुई तो वह विलायत की सरहद में नहीं आया है। हंस और परमहंस जरूर विलायत में दाखिल हो जाते हैं मगर यह दोनों क़िस्में साहब तलवीन की हैं क्योंकि इस में उतार-चढ़ाव लगा रहता है और परमहंस में उतार-चढ़ाव तो होता है मगर वह इसको इतना मानते नहीं और तमीज नहीं करते अलबत्ता संतगति की सरहद में दाखिल हो जाते हैं। संत की गति साहब तमकीन की होती है और परमसंत की इससे भी जियादा। पस सलूक में जब सालिक को मद्द नजर महज फना जाते बेरंग के मुशाहिदे का हो तो उसका सलूक पूरा होगा। अगर दाहिने बाएं देखने लगेगा और किसी दूसरे प्रकार के कशफ में फंसेगा तो सीधी राह से दूर पड़ जायेगा।

अगर पंथाई को रास्ता और मंजिल चलने में यह खयाल है कि आसमान और सितारे और सूरज और चांद की रोशनी देखे और सूरतों और मूरतों का ध्यान बांधे या दिल के हालात मालूम होने लग जावें या रूहों से तअल्लुक होकर उन पर काबू हासिल करे या गुप्त विद्याओं को जानना चाहे, सिद्धियों और शक्तियों के हासिल करने में लग जावे - अमल और तावीज के सिद्ध में लग जावे तो वह रजोगुणी और तमोगुणी वासनाएं हैं। सालिक को दर्मियानी राह जो सत की है इख्त्यार करना चाहिए वर्ना सीधे रास्ते को भूल कर उससे दूर जा पड़ेगा, महज जात हकीकत और सत पद की प्राप्ति का अगर ध्यान है तो उसका सलूक पूरा होगा। जियादातर यह ही देखने में आता है कि लोग अभ्यास और योग को सिर्फ अजायब परस्ती के लिहाज से करते हैं, उनको चाटक नाटक देखने और रिद्धि सिद्धि को अपने

दुनियाँ के मतलब पूरा करने के लिये असली गर्ज़ होती है, जब यह मामलात नहीं पूरे होते हैं और असल लक्ष्य की तरफ इशारा किया जाता है तो मायूस होकर अपने घर बैठ रहते हैं और कहते हैं कि यह महात्मा नहीं हैं और न कुछ साधूपन है।

"जानना चाहिए कि सलूक की किताबों में जिस मुकाम को जिस ढंग और उनवान से आरास्ता किया गया है पावे तो दिल उसके सिवा दूसरे की तरफ मायल न हो और उसके इख्तियार करने में हिम्मत मुस्तहकुम होवे कि बिला हुसूल उस के आराम न मिले।"

अर्थात - सालिक को चाहिए कि अगर वह किसी शगल और अभ्यास में लग गया है तो पहले उसको सलूक की किताबों में देखना चाहिए कि उसका अमल और शगल उसी मुकाम के ढंग और कायदों के मुताबिक है या नहीं, अगर है तो अपना दिल सिवाय उसके किसी दूसरी तरफ नहीं लगाना चाहिये और उसको इस तरह इख्तियार करे और हिम्मत को ऐसा मजबूत कर ले कि जब तक वह बात पूरी न हो जावे आराम से न बैठे।

"लेकिन इसकी तलब ऐसी है कि इसके हासिल करने में मौत का सामना है इसलिए तजवजुब में पड़ जाये और मुक़द्दम करने में उसके मुतरद्दि हो जाय। लेकिन बाज लोग ऐसे होते हैं कि जो साधन वह इख्तियार करते हैं उसमें ऐसी कठिनाई देखते हैं जैसे कि मौत की तरह सामने जाते हुए भ्रम और दुविधा में पड़ जाते हैं कि करें य न करें और फिर सब कामों पर उसी शगल को तरजह देते हुए घबराते हैं।

"हर इन्सान के इन के इस के अख़्तिआर करने में एक शान है मगर मेरे मुख्त्यार यह है कि सालिक अपनी पूरी हिम्मत उसी जानिब फेरे कि फगयज और सुन्नते मोकदा और सुन्नते जुवायद से फारिग होकर कल्मा तौहीद की तरफ मुतवज्जह हो और जिक्र व फिक्र व उन्स के मुकाम में मुस्तैद रहे और चन्द रोज नवाफिल व तलावत कुरान और तस्बीह और वजीफा और दुआ कसरत इख्तियार करे और सबाब का जखीरा पैदा करे और इबारात व इशारात और तमाम ऐमाल खैर की तजईन से किनारा कशी करे और रात दिन अपनी मौहुम हस्ती की फ़ना में कोशिश करे तब उम्मेद है कि इनायत अजली का ज़ज़बा उन शख्स को ख़ुदी से निकाल कर फ़नाउलफ़ना तक और उसके आगे बकाउलबका की सरहद तक पहुँचा देगा तो खुदा ही की जात और उसी की सिफत को देखेगा और तमाम उसी का असर पाएगा और सब फेल उसी का मालूम होगा।"

अर्थात - यह मालूम है कि हर आदमी की शकल सूरत एक दूसरे से नहीं मिलती है, उसकी प्रकृति आदतें और संस्कार भी अलग-अलग होते हैं लिहाज़ा इसी हिसाब से वह तालीम को अपने-अपने तरीके से कबूल करते हैं, मसलन किसी शख्स का संस्कार शब्द का है तो शब्द सुरति की तालीम में उस को आसानी होगी और किसी दूसरे का दृष्टि मार्ग का है तो उसको यह ही तालीम सहल और अच्छी मालूम होगी वगैरह-वगैरह मगर सब तालीमों में यह बातें जो लिखी जाती हैं आम हैं और शामिल रखना चाहिए -

पहले अहले इस्लाम के अकीदे के मुवाफिक सूफी लोग

इस तरह तालीम देने को मौजूँ और मुनासिब खयाल करते हैं कि सालिक अपनी पूरी तवज्जुह परमार्थ की तरफ-फेरे इस तरह से कि पहले फर्जों को अदा करे यानी नमाज जो फर्ज की गई है - उसके बाद वह बातें और अमल जो हजरत पैगम्बर साहब ने ताकीद के साथ करने को फरमाई हैं। और उसके बाद वह बातें और अमल जिनको कि जनाब रसूल सलल्लाह अलहे व आलही व असहाब वसल्लम ने करने को हुक्म फरमाया है लेकिन जियादा ताकीद नहीं की करें-फिर कल्मा तोहीद की तरफ मुतवज्जह हों इन बातों के करने के बाद जिक्र फिक्र और उन्स के मुकाम में मुस्तैदी दिखलाऐ यानी जाप-मनन और सतसंग वगैरह में मशगूल हो - चन्द रोज स्वाध्याय माला फेरना मंत्रों के जाप और प्रार्थना खूब दिल लगाकर करें-बाकी सब कामों की तरफ दिल लगाने- बहस मुबाहिसा करने - जियादा यज्ञ वगैरह करने कराने में हुबत वक्त न लगावे बल्कि रात दिन अपना इस मिट जाने वाले शरीर को लय अवस्था में दाखिल करने की कोशिश लगातार करता रहे- तब ही उम्मेद है कि उस दयाल शक्ति की मौज ऐसे अभ्यासी को उसकी खुदी और अहम पने से निकाल कर लय अवस्था और फिर स्थिति और परम स्थिति की सरहद तक पहुंचा देगा - और जब ऐसा हो जायगा - तो वह सत पद को प्राप्त होकर सत के ही सत गुणों को देखेगा और उसी के असर मालूम करेगा - और **जितने कि काम इस दुनियाँ में हो रहे हैं उस को वह प्रत्यक्ष मालूम होंगे कि उसकी जात से हो रहे हैं।** जो एमाल इस काम के मोअय्यन हों उन को इख्तियार करे और मुखिल से बचता रहे कि तमाम अहल शगल का यह ही मुरज्जा है और तमाम सिलसिले के लोगों का इस पर इत्तिफाक है - पस तालिब को चाहिए कि ऐसे अशगल को इख्तियार करे जिस से बेखुदी पैदा हो।

इस बाब में जिक्र और फिक्र से बढ़कर कोई अमल नहीं है। लेकिन जिक्र के बाज इक्साम हैं कि बाज-बाज पर मुकद्दम है और मशायक ने इसी तरतीब से इनको रखा है।

यह भी लाजिम है कि अभ्यास के अलावह ऐसे काम इख्तियार करना चाहिये जो उनके अभ्यास में मदद दे और उन कार्यों से बचना चाहिए जो अभ्यास में हानिकारक हों जितने अभ्यास करने वाले हुए हैं और मौजूद हैं उन सब का यही तरीका है और जितने किस्म के पंथाई हैं उन सब का यही मत है लिहाजा **अभ्यासी को चाहिए कि ऐसे अभ्यास को करे जिन से कि बे खुदी (अपने आप को भूल जाने की कैफियत) पैदा हो जाये और इस हालत को पैदा करने के लिए जाप और धारणा ध्यान वगैरह के सिवाय और बढ़कर कोई अमल नहीं है।** जाप करने के लिए बहुत तरह के हैं मगर ऐसा भी है कि एक जाप से दूसरा जाप अच्छा और ज्यादा लाभदायक माना गया है - यानी यह सिद्ध किया गया है कि फलां जाप अगर किया जाए तो उसके अलावा दूसरी तरह का जाप भी है जो ज्यादा फायदा देने वाला है इस काम को जानने वालों ने इसी लिहाज से तमाम जापों को छाँट कर दर्जेबार तरतीब दे दिया है। बहुत से बुजुर्गों ने इस जिक्र यानी जाप को कई तरह पर बतलाया है मगर उम्दा कलाम इसकी बाबत अबू अब्दुल रहिमान अस्लमी रहमतउल्लाह का है वह कहते हैं कि जाप की कई किस्में हैं उनमें से एक जिक्र जबानी है जो मुँह और जुबान से जाप किया जाता है और इसको सब लोग जानते हैं। दूसरा जिक्र (जाप) दिल का है जो मानसिक है यह जाप बुरे ख्यालों और दुविधा और वहमों को दूर करने वाला है और इससे मालिक के नाम के जाप में दिल लग जाता

है।

एक तरह का जाप और है उसे जिक्रे सिर्र कहते हैं, इसका जाप करने में अन्तर इस तरह भर जाता है कि अगर कोई खयाल और खतरा दिल में आने का इरादा भी करे तो हरगिज न आ सके। इससे मालूम होता है कि जिक्रे सिर्र जिक्रे कल्ब का असर है, सिर एक लतीफ़ा या मुकाम का नाम है जो लतीफ़ा कल्ब के बिल्कुल ऊपर को है। हुजूर दायमी इस लतीफा सिर्र की वजह से हो जाता है। यानी एकटक तवज्जुह का लग जाना- और सिवाय एक चीज के (लक्ष के) सब चीजों का खयाल भूल जाना - इस ही लतीफा सिर की खासियत है - जब तक यह मुकाम नहीं खुलता - उस वक्त तक ऐसी हालत नहीं पैदा होती कि अपने आपको इस तरह भूल जाय कि कुछ याद न रहे सिवाय उस बात के जिसको लेकर या जिस लक्ष की तरफ निगाह लगाकर बैठा है।

दिल के जिक्र और जाप में हमेशा और हर वक्त उलट-फेर और चक्कर है इस वास्ते इसमें हुजूर दायमी नहीं हो सकता।

एक और चौथी तरह का जिक्र या जाप है जिसको जिक्र रूह कहते हैं - इस जाप में जाप करने वाला - अपनी सिफत या गुण से मिट जाता है - मतलब यह है कि जाप करने वाले का यह खयाल मिट जाता है कि जिक्र का करना मेरा काम है या मैं जाप कर रहा हूँ क्योंकि जब उसके सामने सिवाय एक लक्ष्य के जिसको कि "अल्लाह" कहते हैं दूसरी सब चीजें नजर से हट गईं - और कुछ बाकी नहीं रहा - तो जाप करने वाले का यह खयाल बंध जाता है कि परमात्मा खुद ही उसका जाप कर रहा है। ऐसी हालत जब हो जाती

हैं तो जाप करने वाले का न जाप बाकी रहता है न हाल और न कैफ़ियत और न उसका गुण और वस्फ।

“जाप मिटै अजपा मिटै, अनहद भी मिट जाए।

सुरति समानी शब्द में, ताहि काल न खाए।।”

यह हालत सत्संग में आमतौर पर अभ्यासियों की हो जाया करती है कि सत्संग शुरु ही करते वक्त दिल जाप करता हुआ मालूम होता है - लेकिन थोड़ी देर के बाद फिर कोई बात शब्द वगैरह की मालूम नहीं होती - जिसकी शिकायत अकसर लोग अपनी नावकिफियत की वजह से किया करते हैं - और इसको ऐब या अपनी तरफ से नुकसान खयाल किया करते हैं।

इसके बाद अबू अब्दुल्रहिमान अस्लमी रहमतउल्लाह फ़रमाते हैं कि जिस तरह जिक्र और जाप की बहुत सी क़िस्में हैं - इसी तरह फिक्र की बहुत क़िस्में हैं - मिसाल के लिए इस तरह समझना चाहिए - मसलन एक अभ्यासी का जब धारना और ध्यान का दर्जा खतम हो चुका - तो समाधि की बारी आती है - समाधि उस हालत का नाम है कि अभ्यासी सब तरफ से ध्यान हटा कर सिर्फ एक खयाल या एक बात को लेकर बैठता और सोचता है और जब तक वह चाहता है उस बात और खयाल को अपने सामने से हटने नहीं देता - और न कोई दूसरा या दूसरे किस्म का खयाल शामिल होने पाता है। अब एक अभ्यासी को मान लो कि इस खयाल को सामने लेकर बैठा - कि जो-जो गुनाह उसने किये हैं - या जो-जो शास्त्र के खिलाफ बातें अब तक उसने की हैं या पहिले करता रहा है

- वह सामने आते हैं और मालिक के हुक्म जो उसने दिये थे उनके मुताबिक नहीं कर पाया इस बात को ख्याल करता है और पछतावा करके माफी माँगता है। दूसरे यह कि मालिक ने जो-जो अहसान उस पर किये हैं और उसने जो-जो कृपा और दया की है - उसका शुक्रिया अदा नहीं किया और न गुन माना - और अगर कुछ किया भी तो उसके अहसान के मुकाबिल में बहुत कम किया - और खराब तौर से किया इस पर शर्मिंदा होता है - और उस वक्त इन बातों को खयाल करके रंज करता है। तीसरी किस्म की यह फिक्र और सोच विचार कि अज़ल में जो कुछ हो चुका - और अब उसका जहूर होता है - यानी मतलब यह कि इस शरीर को रखते हुए जो कर्म-कुकर्म और सुकर्म में किये हैं - उनके सिवाय जो पुराने संस्कारों की वजह से होते है - और अब उन संस्कारों का उभार होता है - वह किसी तरह मिट नहीं सकते चाहे वह अच्छे हों या बुरे हों - वह होकर रहेंगे - जो विधाता ने लिलाट में लिख दिया - वह लिख दिया। यह खयाल करके सालिक ईश्वर की मदद तलब करता है - इसके मुतअल्लिक एक आइत है - मुक्बुल वलम बमाहु बायन। यानी होने वाली चीजों को लिख कर कलम सूख गया। यहां इस बात की भी फिक्र सामने आ जाती है कि जो बुराई या भलाई लिख गई है वह किसी तरह मिटे और दूर हो। इसके अलावह एक और भी फिक्र की जाती है या सामने आ जाती है कि समाधी में यह सोचा जाता है कि परमात्मा ने कितने कैसे ब्रह्माण्ड, चाँद, सूर्य, सितारे अपनी कुदरत से बनाए - या कैसी-कैसी अजीब बातें बनाईं। इन बातों का खयाल उभर कर खालिक के दिल पर परमात्मा का बड़प्पन और मालिक कुल होने की याद ताजा हो जाती है।

इसके बाद फिर हजरत अबू अब्दुलराहमान अस्लमी रहमत- उल्लाह यह फरमाते हैं कि फिक्र करने वाले का साथी नफसयानी अपना मन है - और जिक्र करने वाले का साथी वह मालिक कुल है और यह जाहिर है कि मनन और सोच-विचार में इधर-उधर भटकाव हो सकता है - और हो जाता है - क्योंकि इसमें दखल मन, बुद्धि और अहंकार का है - लेकिन शब्द में सिर्फ वास्ता, डोर और लगाव परमात्मा का ही हैं - क्योंकि यह धुर शब्द के साथ संबंध रखता है और धोखा इसमें मुश्किल से होता है - विचार-शक्ति बुद्धि तत्व से आई है और शब्द धुर भण्डार से आया है। फिक्र से जिक्र को जियादा वकअत और तरजीह है - इसकी एक दलील यह है कि जाप और शब्द मालिक कुल का गुण है - और फिक्र ऐसा नहीं है - जैसा कि मैं ऊपर लिख चुका हूँ - **जिक्र फिक्र के ताबे नहीं है - और फिक्र जिक्र के ताबे है**, जिक्र फिक्र की बनिस्बत बहुत कामिल और बड़ा है शुद्ध है क्योंकि फिक्र में तोबा यानी पश्चाताप वगैरह की फिक्र की जाती है और शब्द और जाप में नाम से महजनामां की जात की याद होती है। बरखिलाफ इसके फिक्र में नाम की तरफ तबीअत मुतवज्जह न होने के सबब से नामी के गुणों की तरफ खयाल और तबीअत रूजूअ नहीं रहती है और यह ध्यान का बड़ा भारी फर्क है और इसका असर भी ऐसा है कि असल और नकल में जो फर्क होता है। मालिक कुल ने एक आइत में यह इशारा किया है कि तुम मेरा जिक्र करो - मैं तुम्हारा जिक्र करता हूं। यहाँ पर अपने आप को जाकिर कहा है - फिक्र करने वाला नहीं कहा है। मेरा जाती तजरबा यह है कि जब जाप कभी नहीं होता - या समाधि में अभ्यासी जब जाता है - तो उस वक्त जाप महसूस नहीं होता - तो अकसर खतरे और गुनावन होने लगते हैं - यानी शेखचिल्ली कैसे

मनसूबे बाजियां होती हैं - तो यह बिल्कुल वक्त का जाया करना होता है - या बाज वक्त कोई ऐसा खयाल सामने जम जाता है - कि जिससे न दुनियाँ का फायदा होता है - न परलोक का - बल्कि समाधि की मजबूत कुव्वत की वजह से बेहूदा खयाल इस क़दर मजबूत हो जाता है कि जिसका असर रग और पट्ठों में हो जाता है और वह एक तरह का संस्कार बन जाता है - जो मरते दम तक बाज वक्त नहीं जाता और दूसरों पर भी असर लाता है। मन कुछ न कुछ करेगा ही - इस लिये जब कि वह समाधि में बेकार खयालात लाकर सामने रखता है - तो इससे यह ही अच्छा है कि कायदे के साथ मुकर्रर कम खयालात और मानसिक पूजा वगैरह को काम में लाया जावे - और अच्छे-अच्छे बुजुर्गों के आजमाये हुए मराकिबे और ध्यान स्तेमाल में लाये जावें।

"अगर कोई साहब इस बात को इस तहरीर से न समझ सके तो मुझ से जबानी आकर समझलें। इसमें बड़े मार पेंच हैं - बाज वक्त तमाम मिहनत रायगां जाती है और अभ्यासी बजाय इसके कि ज्ञानी बने - पूरा राक्षस और शैतान बन जाता है। परमात्मा अपना रहम करें।

आरिफ रब्बानी हजरत अब्दुल करीम गैलानी जुबेदी रहमत उल्लाह यह फरमाते हैं कि जिसको जिक्र कल्ब हासिल हो गया - यानी मानसिक जाप का उच्चारण हो गया - उसकी पहचान यह है - कि जाप करने वाला अपने जाप को हर वक्त या बाज वक्त अपनी ताकत और स्तैदाद के मुवाफिक तमाम चीजों या बाज-बाज चीजों से सुनता हैं - मस्लन अपन दिल से - बाईं तरफ से या दाहिनी तरफ

से या हृदय के बीचों बीच से या भों के दर्मियान या कान के दाहिनी तरफ़ में और कभी बाईं तरफ से और फिर तमाम सर से। जिसको रूह का जिक्र हासिल हो गया है उसकी पहिचान यह है - कि दुनियाँ में जितने जानवर हैं, दरख्त हैं और जो चीजें है। उन सबके अन्दर जो शब्द हो रहा है, सुनता है - और उसको यह मालूम होता दे कि हर चीज की जो आवाज है - वह शब्द ही शब्द है। मस्लन घण्टी की जो आवाज होती है या किसी बरतन की झन्कार हो या चक्की चलने की आवाज हो या हवा चलने की सनसनाहट और पत्तों की खड़खड़ाहट हो - उन सब को यह खयाल करता है कि शब्द हो रहा है। लेकिन दिल के जाप और इस रूह के जाप में अलहदा-अलहदा फर्क है कि दिल के जिक्र में जिस शब्द को उसने करार करके सुनने या मालूम करने की आदत डाल ली है - वह ही शब्द की सूरत हर जगह और हर चीज में सुनाई देती है - जैसे ओम्-ओम् की ध्वनि का उस शब्द की आवाज मुकर्रर कर ली है या राम-राम की आवाज की आदत डाल ली है तो उसको हर जगह और हर चीज से "ओम्-ओम्" और "राम-राम" ही की ध्वनि निकलती हुई सुनाई देगी या मालूम पड़ेगी।

बरखिलाफ इसके जिक्र रूह में हर किस्म की आवाज को अलग-अलग और अलहदा-अलहदा सुन कर और मालूम करके यह खयाल करता है कि यह सब शब्द परमात्मा के हैं। इसमें सिवाय परमात्मा के जिक्र के और किसी को करता धरता खयाल ही नहीं करता है।

जिक्र कल्ब में हुजूर हक और हुजूर खल्क बराबर है और

जिक्र रुह में हुजूर खल्क की बनिस्बत हुजूर हक को गल्बा है।

जिक्र सिर में जाकिर को सिवाय हुजूर हक के और कोई हुजूर नहीं होता। मतलब इसका यह है कि जब दिल का जाप होता है, तब चाहे परमात्मा का खयाल रहे या दुनियाँ का या दुनियाँ की चीजों का - तबीअत लगी रहती है - यानी आवाज भी मालूम हो रही है और ईश्वर का ध्यान भी आ रहा है और कभी दुनियाँ की तरफ भी तबीयत मायल है, दोनों हालतों में शब्द मालूम होता रहता है। लेकिन जिक्र रूह के वक्त बमुकाबिले दुनियाँ और दुनियाँ की चीजों के ईश्वर का ख्याल ज्यादातर रहता है, दुनियाँ की तरफ कम रहता है। और जिक्र सिर के वक्त सिवाय ईश्वर के दुनियाँ की तरफ खयाल ही नहीं जाता है - खाली ईश्वर का ध्यान बंधा रहता है।

1. लतीफा कल्ब बाँई पसली के नीचे की तरफ है जहाँ दिल धड़कता मालूम होता है।
2. लतीफा रूह दाहिनी पसली के नीचे है।
3. लतीफा सिर लतीफा कल्ब के जरा ऊपर की तरफ है।
4. लतीफा खफी लतीफा रूह के ऊपर की तरफ है।
5. लतीफा अखफी सिर और लतीफा खफी के ऊपर बीचों बीच में जहाँ पर हिल्की भर आया करती है। सूरत इसकी यह है:

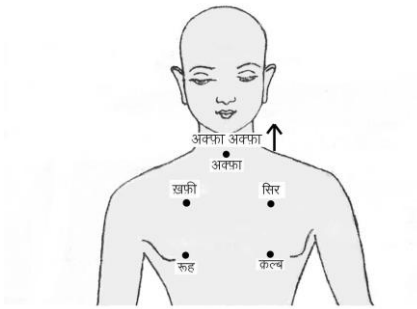

बाईं तरफ़ दिल धड़कता है इस वजह से यहाँ धड़कन और आवाज ज्यादा मालूम होती है दाहिनी तरफ ज्यादा साफ नहीं मालूम होती बल्कि खयाल सा आता है कि धड़कन होती है लेकिन इस कदर कमजोर कि मुश्किल से पता चलता है और बाज लोगों को पता नहीं भी चलता और लतीफा सिर में कभी कुछ मालूम होता है और कभी नहीं। और जिक्र खफी यह है कि वजूद रूह में छिप जाता है जैसे मख्लूकात जिक्र सिर में छिप जाते हैं। जिस जाप की आवाज मालूम न हो उसको जिक्र खफी कहते हैं अपने जिस्म की निगाह सुरत से हट जाती या जिक्र और शब्द का वजूद सुरत में समा जाता है जिस तरह कि शब्द सुरत में समा जाता है। जिक्र और शब्द में भूल और गफलत नहीं होती और न नसियां होता है। तो खासकर यही एक सबसे अच्छा वसीला असल नतीजा के पाने का है ऐसे वसीले को पकड़ना सहीह इबादत और उपासना है। अब यह उपासना चाहे जिस्म हो या जिस्मानी हो स्थूल हो था सूक्ष्म, नाम हो या नामी हो या उसके सिवा और कुछ न हो। मगर जिस वसीले से मकसूद को भूल जाए उसका वसीला पकड़ना और उसकी तरफ

मुतवज्जह होना गुमराही और झूठ है - चाहे वह कुछ भी हो। इसलिए सूफी के तमाम कर्म और वचन जिसमें याद और जागृति और ज्ञान पैदा हो जिक्र और जाप कहे जाते हैं। और जो ऐसे न हों वह जिक्र और जाप हरगिज नहीं हैं। बाज लोग यह कहते हैं कि जिक्र यानी जाप की बहुत सी किस्में हैं। जिक्र जुबान से जो किये जाते हैं वह हलके भी होता है और जोर से भी इसको जिक्र लिसानी (जुबानी) कहते हैं। यह जुबानी जिक्र और जाप कल्ब-रूह-सिर-खफी-अखफा और अखफी अखफा होते हैं - यानी हर लतीफे पर किये जाते हैं और लफज के साथ किए जाते हैं इसमें हरफों की सूरत इख्तियार की जाती है और यह भी होता है कि कभी एक हरफ को पहले बोलते और कभी उसी हरफ को बाद में। शब्द में हरफों के बोलने के वक्त जो हरकत या ठहराव वगैरह होता है उसके कायदे बंधे हुए हैं। अगर उन हरफों को आवाज से अदा करे और बोले तो "झिहर" कहलाते हैं। और बिला आवाज के बोले जो खुद ही सुन सके उनको "खफी" कहते हैं। यहाँ जो खफी का लफज लाया गया है उसके मानी छुपे हुए के हैं। लतीफे या मुकाम का नाम नहीं है जैसा कि ऊपर उसका जिक्र आया है।

जिक्र कल्ब और मानसिक जाप में शब्द की सूरत को बार-बार याद करना या उस नाम के नामी को दिल में अपने हाजिर और सामने रखना इस तरह पर कि हरफ के आगे और पीछे का कुछ ख्याल न किया जाए बल्कि एक मर्तबा उस नाम के हरफों और हरकतों और ठहराव को दिल में हाजिर कर लेना है। जिक्र रूह में यह होता है कि उस नाम को भूल जाना होता है। जिसको कि जपता है और उस नाम के नामी को दिल में हाजिर व कायम कर लेना

होता है मस्लन लफज के हरूफ वगैरह जिन से कि वह नाम बना है याद नहीं रहते हैं बजाय उसके ईश्वर की याद बाकी रह जाती है।

चूँकि असल फितरत यानी प्रकृति सब की अलग-अलग होती है इसलिए जाप करने वालों की अलग-अलग खासियतों की वजह से जाप और जिक्र की भी जुदी-जुदी सूरतें होती हैं - मस्लन बाजों को जिक्र कभी हो जाता है और अक्सर नहीं होता - बाजों को इसके बरअक्स होता है। बाजों को मरते दम तक नहीं होता - लेकिन आखिरी वक्त एक दम भभूका सा फूट निकलता है। अलबत्ता सब लोगों को मालूम रहता है कि हम जाकिर हैं। और जाप करते रहते हैं और यह भी जानते हैं कि हमारे और उसके दर्मियान जिसका हम ध्यान करते हैं जाप जरूर है। सबसे बढ़िया दर्जे का जाप यह है कि जाप और जाप करने वाले का नाम और निशान भी दर्मियान से उठ जावे-और जिसका कि जाप किया जाता है वह ही सामने रहे - और जाप करने का आनंद भी न रहे और आनन्द को भी न जाने। जिक्र अखफ़ा और अखफी अखफा में ऐसी हालत हो जाती है जो ऊपर बयान की गई है यानी आनन्द का और आनन्द के जानने का खयाल नहीं होता।

जिक्र अखफा उस जगह और मुकाम के नाम को कहते हैं जो नकशे में सबके ऊपर और बीचों बीच दिखलाया गया है - और अखफी अखफा वह मुकाम है कि जो नुक्तये सुवेदा के मुकाम यानी दोनों भवों के दर्मियान है। कण्ठ यानी गले की जगह जो जिक्र होता है वह बहुत साफ और मजबूत और देर तक ठहरने वाला होता है मुमकिन है कि अकफी अखफा इसी को कहते हैं इम मुकाम की

तफ़सील में जरा शक है दरियाफ्त तलब है।

हजरत शेख शरफुद्दीन यहि मुनेरी रहमत उल्लाह फरमाते हैं कि जिक्र यानी जाप की चार सूरतें हैं: - अव्वल यह कि असलियत और गहराई और सत के भण्डार में जबान से जप होता है - लेकिन दिल वहाँ नहीं पहुँचता और गाफिल है - दूसरे जबान जाकिर है और दिल भी उसके साथ और मुवाफिक है लेकिन इतना है कि दिल कभी-कभी सो जाता है मगर जबान का जाप नहीं जाता। तीसरे में जबान दिल से और दिल जबान के साथ और मुवाफिक होते हैं लेकिन कभी-कभी दोनों गाफिल हो जाते हैं: चौथे में यह होता है कि जुबान गाफिल और बेकार होती है मगर दिल जाकिर और हाजिर रहता है। यह बड़े दर्जा का जाप है। इस जगह बिल्कुल जरूरी काम हुजूर और आगाही का है।

"दिल का हर वक्त काम पर हाजिर रहना और यह मालूम होना कि काम जाप का हो रहा है हुजूरी कहलाता है।"

अर्थात - आगाही - खबर और ज्ञान का नाम है। यही जिक्र और जाप की हकीकत है और जाप करने वाले को इस मुकाम में भी वह रुतबा हासिल हो जाता है कि अपने दिल की आवाज को सुनता है और जाप करने वाले के सिवाय कोई दूसरा उस आवाज को नहीं सुन सकता।

बाज लोग यह कहते हैं की अभ्यास शुरूअ करने वाले के लिए जिक्र और जाप मुफीद होता हे - दर्मियानी के लिए स्वाध्याय वगैरह और इन्तहा पर पहुँचे हुए के लिए नमाज संध्या वगैरह।

लेकिन मेरे नजदीक यह अच्छा है कि जिक्र खफी यानी दिल का जाप सिर्फ किया कर और नाजिन्स और गैर आदमी और गैर सोहबत के नकशों से दिल को साफ रखे - और परमात्मा के सिवाय किसी की तरफ तवज्जुह न करे और एकाग्रता के साथ दिल हाजिर रखने की तरफ पक्का इरादा कर ले - और सत और मालिक की तरफ उन्सियत और लगाव हसिल करना-और अपने आपे को मेट कर उसी में महब और लय हो जाना - और इसी काम में अपने आप को मिटा देना - सब में जियादा नजदीक रास्ता और असल पद तक पहुंचने का यकीनी जरिया है।

अब जिक्र के चन्द आदाब लिखे जाते हैं। आदाब वह बातें हैं जो आप करने में और उनके सहल बनाने में मददगार होती हैं। अगर यह बातें न बरती जावें तो कठिनाई होती है - और अच्छी तरह काम नहीं बनता है। यह बातें बीस हैं जिन में से पांच ऐसी हैं जो जाप करने से पहिले की जाती हैं - बारह ऐसी हैं जिनका जाप शुरू कर देने के बाद ध्यान रखा जाता है और तीन जाप के बाद।

जाप और जिक्र शुरू करने से पहिले की यह बातें हैं –

1. तौबा या पश्चाताप करना कि अब तक जो कुछ किया सो किया अब आयन्दा के लिए हमेशा के वास्ते वादा करता हूं कि अब ऐसी बातें कभी नहीं करुंगा - जो धर्म के विरुद्ध अब तक की हैं।

2. दिल को मुतमैयन और शान्त रखना।

3. तहारत हासिल करना यानी शौच करना नहा-धोकर साफ कपड़े पहिनना और साफ जगह पर बैठना वगैरह।

4. अपने शेख यानी गुरु से मदद लेना।

5. यह बात जानना कि गुरुदेव से मदद लेना ऐसा ही है जैसा इष्टदेव से।

जाप और जिक्र के वक्त की शर्तें यह हैं-

1. आसन के साथ बैठना - यह तबीयत की बात है कि दो जानू बैठे जैसे नमाज में बैठने हैं - या किसी दूसरे आसन पर - सबसे अच्छा सिद्ध आसन मालूम होता है और दोनों हाथ दोनों रानों पर रखना।

2. जगह जहाँ बैठना है उसको खुशबूदार करना धूप और लोबान वगैरह सुलगाकर या हवन करके और खुशबूदार फूल ताजा रखकर।

3. साफ करके पहिनना और कोठरी को अंधेरा कर लेना।

4. दोनों आँखों और दोनों कानों के सूराख बन्द कर देना। (हमारे यहाँ अंधेरी कोठरी और कानों को बन्द करने की शर्त नहीं है)।

5. शेख या गुरु की सूरत को दिल में हाजिर रखना।

6. जाहिर बातिन सच्चाई और खलूस से सिर्फ कल्मा तौहीद को इख्तियार कर लेना।

(हमारे यहाँ जाप के वक्त इसकी जरूरत नहीं समझते - सिर्फ शब्द सुनने पर ध्यान रखते हैं - यह पुराने उसूल के मुताबिक बयान है)।

यह शर्ते जो बयान की गई हैं कि गुरु की सूरत जहन में रखे और कल्मा तौहीद के मानी को जहन में रखे-इस वजह से दाखिल की हैं हाजतों के पूरा करने में यह बहुत मदद देती हैं।

अब जो जिक्र के बाद की बातें इख्तियार करना चाहिए वह यह हैं-

1. जाप और जिक्र करने के बाद देर तक चुप होके बैठे रहना चाहिए।

2. प्राण को रोके रखना चाहिए।

3. सर्द पानी और सर्द हवा से थोड़ी देर तक बचते रहना चाहिए। क्योंकि इस से दिल की गर्मी जाती रहती है और जिस्म के रगों के मुंह खुल जाने से उनमें सर्दी मिट जाती है।

अगर कल्मा तौहीद का जाप (जिसकी वजह से मालिक कुल के चरणों में प्रीति होती है) किया जाए और फिर भी मालिक कुल से कोई लगाव पैदा न हो तो समझ लेना चाहिए कि आप का अमल ठीक कायदे से नहीं किया गया है और दर्मियान में कोई खराबी पैदा हो गई है इसलिए फिर उसको बाकायदे शुरूअ करना चाहिए।

बाज सूफी यह फरमाते हैं कि जबानी जिक्र या जाप से सालिक दिल के जाप को पहुँच जाता है यानी उसके कल्ब का मुकाम खुल जाता है, लेकिन जब जुबान और दिल दोनों एक हो जावें तो कोई शुबह नहीं है कि जाप उस का हलके-हलके कमाल को पहुँच जायगा। मगर नक्शबन्दिया सिलसिले में जजब या बातिन के साथ जिक्र कल्बी पर भरोसा करते हैं और पहिले ही पहिले सखिने वाले ऐसे जिक्र से शुरुअ करते हैं, जैसा कि इस सिलसिले के

अभ्यासियों को मालूम है। नक्शबन्दिया सिलसिले के नौसिसिया और शुरूअ करने वाले अभ्यासी जिक्र कल्बी यानी मानसिक जाप से मजजूब हो जाते हैं, यानी विराट रूप और देश से उनका सम्बन्ध हो जाता है और दूसरे सिलसिले के इन्तहाई पहुँचे हुए अभ्यासी जिक्र कल्बी से मजजूब होते हैं। इन दोनों में फर्क मालूम करना चाहिए कि जिक्र या जाप के वक्त हब्स नफस करना यानी प्राण रोक रखना बाज सूफियों के नजदीक बड़ी अच्छी बात है, बल्कि खतरात यानी संकल्प के मिटाने के लिए बहुत मुफीद है। चिश्तिया, कबरदिया, शुत्तारिया और कादरिया सिलसिलों में सूफियों ने प्राण के रोकने को जरूरी शर्त करार दिया है, मगर नक्शबन्दियों ने इसको जरूरी नहीं करार दिया, और उसके उम्दा होने में भी इन्कार नहीं करते हैं लेकिन सहरवर्दिया बुजुर्ग लोग हब्स नफस और प्राण के रोकने को बिल्कुल मना करते हैं।

अब मालूम होना चाहिये कि दो बातें हैं - एक हब्स नफस (सांस रोकना) है और दूसरा हिजरे नफस (सांस तोड़ना) है। हब्स नफस के दो तरीके हैं (1) तख्लीआ, (खाली करना) (2) तहलीआ (हज्म करना) पेट की तरफ से सांस को खींचना और फिर नाफ़ और उसके चारों तरफ से खींचना पीठ की तरफ और फिर सांस को रोक लेना सीने में या दिमाग में। इसका नाम तख्लीआ है, जिस के मानी खाली करने के हैं।

और सांस का अन्दर की तरफ खींच कर फुलाकर बन्द कर लेना, इसका नाम तहलीआ है, इस तरीके में बसबब फूल जाने पेट के नाफ़ पीठ से बहुत दूर पड़ जाती है। पहिले तरीके में बहुत

हरारत पैदा हो जाती हैं दूसरे तरीके में खाना खूब हज्म हो जाता है।

सांस का तोड़ना (हिजरे नफस):- सांस का तोड़ना दोनों तरफ से यानी पेट और पीठ की तरफ से इस तौर पर कि एक मुद्दत मुकर्ररह तक सांस को लम्बा न करे बल्कि जहाँ है वहीं रोक दे हिजरे नफस कहलाता है। यह अमल इसमें शक नहीं है कि दिल में हरारत और गर्मी पैदा करता है मगर फिर भी हरारत हब्स नफस की इससे बढ़ कर है।

इस बात की जरूरत नहीं है कि उंगलियों को दोनों नथनों पर रखे और दोनों कानों के सूराखों पर और दोनों आँखों पर रखे जैसा कि बाज लोग इसको करते हैं, अकसर राधा स्वामी पथ वालों को ऐसा करते देखा है। एक तरीका हजरत खिजर अलेहिस्सलाम ने हजरत अब्दुल खालिक गुज्दवानी को यह बतलाया था कि हौज में जाकर गोता मार कर यह अमल करे इससे बहुत तासीर होने की उम्मेद है।

साँस के रोकने या प्रणायाम वगैरह से जो हरारत या गर्मी वगैरह बढ़ जाती है वह मुसाफिर लोगों में होती है - मुकीम में नहीं होती। को लोग प्राणायाम को नया करना शुरूअ करते हैं, उनको जब तक बहुत दिन नहीं हो जाते, और पक्के नहीं पड़ जाते, उस वक्त तक मुगफिर कहते हैं, जिसके मानी सफर करने वाले या रास्ता चलने वाले के है। जिन लोगों को पूरा अभ्यास हो जाता है और मजबूत और पक्के हो जाते हैं उनको मुकीम या ठहरा हुआ बोलते हैं। इसलिये जो पक्के पड़ गये हैं - और प्राणायाम में मँज गये हैं, उनको गर्मी और सर्दी कुछ नहीं मालूम होती और न कुछ नुकसान

होता है। लिहाजा जो कोई प्राणायाम किसी जानने वाले से सीख कर कायदे के साथ अभ्यास करे और दर्मियान में कोई विघ्न न पड़े और मामला खराब न हो जावे और सांस के साथ जाप को खयाल में अभ्यास करे तो हर वक्त और हमेशा का जाप उसको पैदा हो जायगा, जिसको अजपा जाप कहते हैं और जिस कदर उसको जियादा बढ़ाता जायगा उसी कदर हुजुरी बढ़ती जायगी यानी दिल हाजिर रहेगा।

जानना चाहिये कि प्राणायाम करने के जमाने में गिजा बहुत सर्द-खट्टी नहीं स्तैमाल करना चाहिये। शुरूअ में दोनों कानों के परदों या नाक के सूराखों या पाखाने से खून जारी हो जाता है, इससे खौफ नहीं करना चाहिये और काम करते रहना चाहिए कि थोड़े जमाने में यह बात दूर हो जावेगी। बहुत गर्म खाने से खतरा है, उसकी गर्मी असली हो या आरजी बचता रहे, वर्ना मर्ज पैदा हो जायेंगे या बढ़ जायेंगे।

यह भी नहीं चाहिए कि एक बारगी प्राणायाम की तादाद और संख्या को बहुत जियदा बढ़ा दे कि मुश्किल पड़ जाये, बल्कि थोड़ा-थोड़ा बढ़ावे, सांस को नाक के रास्ते खारिज करे, मुँह से न करे ताकि दांतों को नुक्सान न पहुचे। पेट भरे हुए और भूखे होने पर प्राणायाम का अभ्यास न करे, बल्कि दर्मियानी हालत में जबकि अफरा हुआ न हो या पेट बिल्कुल खाली न हो, उस वक्त करे। यह शर्त नौसिखिये के वास्ते हे। लेकिन जब खूब मश्क होकर पुराना पड़ गया हो, उसके लिये यह जरूरी नहीं है वह जब चाहे अभ्यास को करे। मेरी राय में अगर किसी को इसका शौक हों तो प्राणायाम किसी

खूब वाकिफकार आदमी से सीखे - किताब देखकर या मामूली आदमी के बतलाये हुए से न सीखे। मैं जहाँ तक खयाल करता हूँ प्राणायाम का असली जानने वाला शायद अब कोई मुश्किल से मिलेगा, और अब लोगों की तन्दुरुस्ती भी इस काबिल नहीं है कि इस को करें। इसलिये मेरी राय में तो इससे बिल्कुल बचे और हरगिज न करे। हमारे तरीके में प्राणायाम की जरूरत ही नहीं पड़ती है, और न महात्माओं ने जाप और जिक्र के साथ इसके करने की शर्त लगाई है **- लिहाजा मैं अपने यहाँ के साधुओं को यह राय देता हूँ कि, वह प्राणायाम न किया करें।**

बाज ज्ञानी यह कहते हैं कि जब इन्सान का नफस तनकिया बातिन कर लेता है, और मालूफात और महसूखात की ख्वाहिश से पाक हो जाता है, और इल्तगराक जिकर और न्यामत हुजरी से मामूर हो जाता है और उसको एक किस्म की निस्बत और रब्त रूहानियत से पैदा हो जाता है और इस निस्बत से उसका दिल रोशन हो जाता है तब उस नूर से जात हकताला को मुशाहिदा करता है।

बाज महात्माओं का यह खयाल है कि जब अभ्यासी का मन और अन्तःकरण मल विक्षेप और आवरण से पाक हो जाता है और दुनियाँ की चीजों की वासनायें नहीं रहती जाप में बिल्कुल डूब कर उसका दिल बिल्कुल हाजिर रहता है तो अब उसको एक किस्म का लगाव और सम्बन्ध रूहानी मण्डलों से पैदा हो जाता है और इस सम्बन्ध की वजह से उसका दिल रोशन हो जाता हे - तब इसी प्रकार और ज्ञान से सतपद साक्षात्कार कर लेता है और विश्वास

उसका पूरा हो जाता है। इस वक्त जो मुराद मंशा और हुक्म परमात्मा के हैं, वह सब से वाकिफ हो जाता है, जिसकी वजह से इन जाहिरी और स्थूल शरीर और इन्द्रियों से छुपी हुई बातों और गुप्त चीजों को देख और दर्याफ्त कर सकता है और अब ऐसा आदमी अपने स्थूल और सूक्षम शरीर से इस दुनियाँ से निकल कर पार हो जाता है।

जिज्ञासुओं को मालूम होना चाहिए कि मुकामों के तै करने में पहिला दर्जा तौबा यानी पश्चाताप का है और आखिरी दर्जा हैरत का है। बाजों ने आखिरी दर्जा रजा और तस्लीम का माना है।

हैरत वह हालत है कि अभ्यासी को यह मालूम होता है कि आगे और पीछे और हाल की कोई बात ही उसकी समझ में नहीं आती है कि क्या होता है और क्या होगा और क्या होना चाहिए, एक जगह पर खड़ा होकर रह जाता है। न उस को कोई उम्मेद है न आस और न खोए हुए का रंज, बुत सा होकर रह जाता है - मतलब उसका यह नहीं है कि वह जहाँ बैठता है, बैठा रह जाए या जिधर को देखता है देखता रह जाए या खाए पिए नहीं या दुनियाँ के काम न करे या पागल की तरह हो जाए या मिट्टी का सा लोंदा बन जाए। यह बिल्कुल इस तरह बना रहता है जैसे और दुनियादार आदमी। मगर ज्ञान इस तरह का हो जाता है कि जैसी अवधूत गति होती है, न आने की खुशी, न गए का रंज और सबब इस हालत का उससे दर्याफ्त किया जाए तो बतला न सके।

हैरत दो तरह की होती है-एक हैरत मजमूम यानी बुरे किस्म की। दूसरी हैरत ममदूह यानी अच्छे किस्म की।

हैरत में यह बात होती है कि एक गंवार आदमी जिसने कभी अपनी मड़इया को नहीं छोड़ा है, अगर किसी तरह बादशाही महल में चला जाए या कलकत्ता बम्बई के जौहरियों और चांदी सोने वालों की और अँग्रेज़ी पारसी बड़े-बड़े सौदागरों की दूकानों पर जाकर खड़ा कर दिया जाए, ता वह एक दम हक्का-बक्का हो जाएगा या कोई आदमी किसी इन्तहा दर्जे की खूबसूरत औरत या चीज को देख कर अधसमा हो जाता है उसी तरह आदमी परमात्मा के उस प्रकाश को देख कर चकाचौंध की हालत में हो जाता है। लेकिन हैरत की हालत में शक नहीं होता न शंका होती हैं। उस वक्त उसको यह खयाल करने का मौका नहीं होता है कि यह चीज ऐसी ही थी या नहीं और अगर है तो क्यों है और किस तरह।

हैरत और शक की सूरत को पहिचानना जरा मुश्किल होता है इसलिए शुबह यह रहता है कि वाकई इस अभ्यासी और भक्त की हालत शक की है या हैरत की। तो अब जानना चाहिए कि जात और असली चीज के मालूम होने पर या ज्ञान पूरा हो जाने पर हैरत पैदा होती है। बरखिलाफ इसके अंधकार और नादानी में जो होगा वह शक होगा। इसके अलावह एक पहिचान यह भी है कि हैरत जब होती है वह दिल के हाजिर रहने में होती है यानी अभ्यासी को ज्ञान नाम और नामी का मौजूद होता है लेकिन शक की हालत में गफलत - यानी दिल का गैरहाजिर होना लाजमी है। जो आदमी हैरत में होता है उसको हैरत की हकीकत दर्याफ्त करने के लिए एकदम और एकायकी निहायत शौक ऊपर चढ़ जाने का होता है और शक वाले आदमी को आनन फानन यानी फौरन ही एक दम से बे तवज्जही की वजह से हकीकत और असलियत के दर्याफ्त करने में नादानी के

गढ़े में गिर जाता है। कहते हैं कि हैरत दो चीजों से मिलकर बनी है एक तो जिस्म का इल्म दूसरे उसके बन जाने की वजह न जानने का यानी जिस्म का ज्ञान होता है कि यह चीजें और ऐसी-ऐसी बड़ी-बड़ी बातें मौजूद हैं दूसरे यह कि यह कैसे बन गई और क्यों - इसमें नादानी और शक दोनों मिले हुए मालूम होते हैं। शुबह है कि यह दोनों मिले हैं या नहीं क्योंकि इनमें न तो कोई हिस्सा ज्ञान का पाया जाता है और न अज्ञान का। ऐसा मालूम होता है कि इस आदमी का ज्ञान ऐसे मसालहों से बना हुआ है कि जिस में शक और शुबह का अंश मौजूद है और ज्ञान का अंश होना साबित नहीं हो सकता। ऐसी हालत हमेशा आने जाने नफी असबात अनीती-अनीती और नीती-नीती के दायरों के अन्दर रहती है, इसी किस्म की शक का नाम हैरत मजमूमा रखा गया है यानी बुरे किस्म की हैरत। अब जो हालत इस के बरखिलाफ हो उसकी हैरत ममदूहा यानी अच्छे किस्म की हैरत समझना चाहिए।

हैरत मजमूमा तो आम लोगों के हिस्से में है और हैरत ममदूहा खास साधु महात्माओं की।

अनवार और प्रकाश जो मालूम होते हैं - वह कभी सफेद होते हैं और कभी सब्ज और कभी सुर्ख सबसे आखिर में स्याह या नीले रंग के हैं। यइ नीला या स्याह रंग जबरूती है। यह सब रंग प्रकाश के तत्वुओं पर असली प्रकाश के पड़ने की वजह से मालूम होता है। जानना चाहिए कि चमक और प्रकाश अगर कंधे की दाहिनी तरफ से कंधे से मिला हुआ नजर आवे तो वह प्रकाश उस मवक्किल और देवता का है जो दाहिने कन्धे पर तईनात है और

अच्छे संस्कारों का लिखने वाला या करने वाला होता है। अगर कन्धे से बिल्कुल मिला हुआ न हो तो अपने गुरु और मुरशिद का है। अगर सामने - आगे की तरफ जाहिर हो - तो पैगम्बर साहब या दूसरे औतारों का है। अगर बाईं तरफ मालूम हो और कन्धे में मिला हुआ हो - तो यह प्रकाश बाँई तरफ के देवता या

फरिश्ता है, जो बुरे कर्मों को लिखता या संस्कार बनाता रहता है। अगर वह कन्धे से मिला हुआ नहीं है - तो जान लो कि शैतान का है जिसको कालशक्ति कहते हैं। इसी तरह अगर बाँई तरफ कोई शकल नजर आवे, तो शैतानी धोखा है और अगर ऊपर या पीछे की तरफ से जाहिर हो तो समझना चाहिए कि उन फरिश्तों और देवताओं का है जो जिस्म की निगहबानी करते हैं जैसे विष्णु, ब्रह्मा, रुद्र, आदित्य इन्द्र वगैरह। अगर किसी तरफ यानी किसी दिशा में न हो और फिर उससे खौफ लगे या सूरत मिट जाने के बाद हुजुरी बाक़ी न रहे तो जान लो कि शैतान का फरेब है। अगर सूरत नजर आते वक्त हुजुर यानी शान्ति रहे और जब सूरत चली जाए तब जुदाई का रंज और मिलने का शोक पैदा हो जाए तो जान लो कि यह असली प्रीतम का प्रकाश है और सूरत है। अगर सीने के ऊपर या नाफ़ के ऊपर से जाहिर हो तो शैतान का फरेब समझना चाहिए अगर दिल के ऊपर से जाहिर हो तो समझ लेना चाहिए कि दिल की सफाई के सबब से है। लेकिन सच्चे तलाशी को चाहिए कि इन बातों पर बिल्कुल ध्यान न दे क्योंकि यह दर्मियनी बोतें है असल हकीकत से दूर है:- इन सब को मरीख या मरीखी कहते है - जो माया सरूप हैं।

बाज बुजुर्गों ने इसमें इख्तिलाफ किया है कि आया आरिफ के लिए मुशाहिदा हमेशा रहता है या नहीं। एक गिरोह कहता है कि हमेशा रहता हैं - दूसरा गिरोह कहता है कि हमेशा नहीं रहता। एक आरिफ फरमाते हैं कि मुशाहिदा तजल्ली और पर्दा के दर्मियान में है। कोई-कोई बुजुर्ग यह कहते हैं कि ज्ञानी और दृष्टि मार्गियों को हमेशा दर्शन होते रहते हैं और दूसरे यह कहते हैं कि हमेशा नहीं होते। मतलब यह मालूम होता है कि मुशाहिद यानी आँख से देखी हुई गवाही - और यकीन का होना प्रकाश तो जरूर है - लेकिन वह प्रकाश पर्दा ही पर्दा है - असलियत नहीं हैं - क्योंकि जाते हकीकत में रूप और रंग नहीं है - और तजल्ली और प्रकाश सूक्ष्म और लतीफ माया है - तजल्ली और पर्दे का दर्मियान से यह मतलब है कि मुशाहिदा और दृस्टि में कुछ अंश जाती प्रकाश का है और कुछ अंश (हिस्सा) सिफाती का।

तजल्ली दो किस्म की है एक जाती दूसरी तजल्ली सिफाती।

तजल्ली जाती और प्रकाश सत का अलख-अरूप और अगम है - जो समझने-देखने और थाह लेने में नहीं आ सकता है - उनकी कोई शकल नहीं हैं - माया - सिफात और गुणों से रहित और अलहदा है - लेकिन तजल्ली सिफाती गुणों के सहित नजर में आती है - चाहे वह अन्तर-मुखी आँखों से हो। गालिबन बहस यह है कि जो एक गिरोह यह कहता है कि ज्ञानी के लिए हमेशा मुशाहिदा नहीं है - ज्ञानी वह ही है - जिसका तजल्ली जाती होती है - जहाँ नाम और रूप दोनों नहीं हैं - तब उस के लिए तजल्ली सिफाती और गुणों

सहित प्रकाश कोई चीज नहीं रहता और उसके आगे ऐसा प्रकाश बन्द हो जाता है - या सालिक इसे प्रकाश हद से आगे चला जाता है - उसके लिए वाकई मुशाहिदा नहीं है। लेकिन मैं कहुँगा कि मुशाहिदा जरूर है - और मुशाहिदा तजल्ली जाती और असली का है, जो हमेशा के लिए है। सिफाती तजल्ली का मुशाहिदा उसके लिए बन्द हो गया। ऐसा देखने वाला जो अभी सिफाती तजल्ली और मायाबी के दायरे और हद से आगे नहीं गया है - उस के वास्ते जाती और सिफाती दोनों ही मुशाहिदे हैं। एक तो वह जिस को वह देख रहा है और दूसरा आगे चलकर आएगा। खुलासा यह कि जाती तजल्ली को हुआ भी कह सकते हैं और नहीं हुआ भी। जो है भी और नहीं भी। बात यह है कि **जब रब्ते कल्ब और इत्तसालेसिर मुस्तहकम हो जाए और पूरे तौर से साबित हो जाए तो हर्गिज वसूल का जवाल न होगा - हाँ अतवार और मकाशफात कभी न होंगे**।

अर्थात - जब मन और बुद्धि दोनों के मामिलात ठीक हो जाते हैं यानी तस्फीया कल्ब और तजकिया नफस हो जाता है - और दिल का रब्त और लतीफा सिर से मिलाप गहरा हो जाता है - और जब बखूबी साक्षात्कार हो जाता है - तो जो कुछ वसूल हो गया है - यह जाता नहीं है। यहाँ यह जरूर है - कि कभी प्रकाश नजर आता है और कभी नजर नहीं आता। कभी तो बहुत कुछ दिखलाई देता है - और कभी कुछ नहीं।

“ गीबत और बेखुदी महवियत और फना के वक्त में ऐसी हालत पैदा हो जाती है - कि जिस का बयान नहीं हो सकता - और उस वक्त सिवाय अहदियत हक ताला के और वजूद मुतलक सुभान

ताला के कुछ भी होता नहीं है। अगर कोई यह कहे कि वजूद मुतलक हक सुभान इदराक में आ ही नहीं सकता, और जो कुछ इदराक में आएगा - वह हादिस है और जो सूरत जहन में आती है वह भी आलम है और आलम हादिस है। चूंकि वजूद मुतलक है - तो हादिस कैसे होगा - और जो कदीम है - वह इदराक में नहीं आ सकता।"

अर्थात - गीबत अपने आपे से गुम हो जाना - बेखुदी, अपने आपे की याद न रहना शरीर के आभास का जाता रहना। महवियत, एक ही तरफ लगकर रह जाना, "फना", लय की अवस्था हो जाना - यह सब डालते ऐसी हैं कि जो बयान में नहीं आ सकती। ऐसी हालतों में सिवाय सत की हरती - और उस बजूद मुतलक के सिवाय और कुछ नहीं मालूम होता। वजूद मुतलक वह जात है जिसका अपना आप आधार हो -और किसी के सहारे पर न हो।

अगर कोई यह प्रश्न उठावे कि वजूद मुतलक वह है - जो मन बुद्धि से परे है - उस का ज्ञान हो नहीं सकता - क्यों कि जो कुछ बुद्धि वगैरह से जाना जाता है वह हादिस यानी उतरा हुआ है - और साया की तरह हमेशा नहीं रहता। और जो सुरत कि मन बुद्धि और इन्द्रियों के सहारे जहन में आती है - वह यह संसार है - और संसार हादिस है जो हमेशा नहीं रहेगा। चूँकि वजूद मुतलक सत पुरुष है तो हादिस कैसे हो सकता है - और जो कदीम और हमेशा का है - उस को मन बुद्धि और इन्द्रियाँ नहीं जान सकती।

जवाब उस का यह है कि बात तो असल यही है - जो ऊपर कही गई है और ऐतराज सही किया गया है - मगर उस में

एक भेद है कि फना की हालत में वह निस्बत जिसका मुक्तजा दो तरफ यानी मंसूब और मंसूबअलेह का अस्बात है - उस से सालिक जिस की तवज्जुह फना में है - बिल्कुल गाफिल और बेकार हो जाता है - इसी को फनाएफना कहते हैं - पस यहाँ पर इदराक का अदम है - न कि अदम का इदराक।

अर्थात - वाकई यह है कि एतराज सही है यानी कि वजूद मुतलक कदीम है, वह सत पुरुष हमेशा का है, जो मन बुद्धि से समझ में नहीं आ सकता - लेकिन सालिक लोगों को उसका ज्ञान होता है - यह किस तरह - इसमें एक भेद यह बतलाते हैं कि कायदा यह है कि दो चीजों के मिलाप और सम्बन्ध के कायम करने को एक तीसरी चीज जरूर होती है - जिस को तवज्जुह और सुरत कहते हैं। इसी तवज्जुह और सुरत के उतार चढ़ाव के जरिए से जीव और ब्रह्म या माया और ब्रह्म का सम्बन्ध होता है। यहाँ सालिक को जिस वक्त फना और लय की हालत होती है उस वक्त में जो निस्बत या सम्बन्ध पैदा करने वाली चीज या शक्ति है - वह ही तीसरी चीज है - जो दो तरफ को झुकाव और अपना अमल करती है। अब यों समझो:-

1. एक चीज सम्बन्ध कराने की शक्ति - इस को सुरत या तवज्जुह और रूह कहते हैं।

2. जो सम्बन्ध या तअल्लुक पैदा करता है या पैदा करने का खयाल करता है - वह सालिक है।

3. जिससे तअल्लुक और सम्बन्ध किया जाता है - वह मालिक

कुल यानी ईश्वर और परमात्मा है

फना और लय की हालत में यही सुरत और तवज्जुह - सालिक और मालिक कुल का आबात और कयाम और मेल जोल पैदा कराने का हथियार है - जो रिश्ता और तअल्लुक जोड़ने का काम करती है। इस वक्त यह सालिक जिस की तवज्जुह फना और लय अवस्था में है - बिल्कुल गाफिल और बेकार हो जाता है। इसी गफलत और बेकारी का नाम फनाऐफना है। पस यहाँ पर उस सालिक की तवज्जुह के ज्ञान और इदराक का अदम और अभाव हो जाता है - न कि अदम और अभाव का ज्ञान और इदराक। आगे चलकर ऊपर लिखी हुई तकरीर की शरह हो जाती है।

सूफियों का यह कौल भी है कि जात का शहूद - जात की तजल्ली-जात की मोइयत - और जात की मार्फत भी होती है। तो इनके क्या मानी हैं। हमारा जबाब यह है कि अरफान का नतीजा यह है कि हर चीज को अपने मौके और मर्तबे पर रखे - और हर शै के हक का लिहाज रहे - पस जिस बात के हम दरपै हैं उस में दो अमर हैं - एक जात महज खालिस सादा - दूसरे उमूर जो इस मर्तबे के सिवा हैं - पस अव्वल का हक अस्बात है - और सानी का हक नफी है। अव्वल में मार्फत का हक यह है कि कतअन पहिचाना न जाए। दूसरे में मार्फत का हक यह है कि जैसा है, वैसा पहिचाना जाए। पस पहले में जो मार्फत का कसद करे और दूसरे में अदम मार्फत का - वह काम से दूर जा पड़ेगा। हक को हक और बातिल को बातिल साबित करना मार्फत है। किसी शै की अदम मार्फत से यह लाजिम नहीं आता कि

नफसुलअमर में उसका तहक्कुक न हो। पस जात मुकद्दस हकताला साबित मुहकिक गैर मारूफ़ है - यानी शहूद जात के यह मानी हैं कि जात के सिवा जितने उमूर हैं उन सब की गैबत हो जाए।

अर्थात - जात के शहूद से यह मुराद है कि हम सत को देख सकते हैं और सत अलख, अगम और अरूप है - पस किस तरह उस को देख सकेंगे। इस का जवाब यह दिया गया है कि देखना जो कहा गया है - वह ज्ञान की आँख से कहा गया है न कि इस तरह देखना - जिस तरह इन्द्रियाँ बाहर किसी रोशनी या प्रकाश को देखती हैं। ज्ञान से देखने की हालत यह होती है कि कुछ दिखाई तो नहीं देता लेकिन आत्मा को उस सत की मौजूदगी का ऐसा यकीन कामिल हो जाता है कि गोया वह उसको देख ही रहा है - अगर ऐसे ज्ञानी के जिस्म के कोई टुकड़े-टुकड़े भी कर डाले - तब भी वह यह ही कहेगा - कि मैं उसको इस तरह देखता हूँ जैसे कि तुम मुझ को देखते हो। ज्ञान और विज्ञान का नतीजा और असर यह होता है कि दुनियाँ में जो कुछ मौजूद है उसमें हर चीज को अपने-अपने मौके से बर्ताव करे - और सब का ज्ञान इस तरह से हो कि किसी चीज को बेकार न समझे और उसका ठीक स्तैमाल जानता हो - हर चीज के हक का लिहाज रखे - यानी जैसा जिस से बर्ताव करना चाहिए - वैसा बर्ताव करे।

अब जिस बात की तलाश के हम पीछे पड़े हुए हैं वह दो बातें हैं।

1. एक तो जात महज सादा, गुणों से अलग है -

2. दूसरी (सिफात) इसके अलावा जिन में माया और गुणों की मिलौनी है।

अब सत या मालिक कुल के वास्ते हमारा यह हक साबित करने का है कि वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा - यानी उस की हस्ती कायम और साबित करने की कोशिश की जाती है,) और कोशिश यह है कि उसी जात को अपना असली मकसद करार देकर उस से मिलाप और करीब पहुँचने की हर तरह से कोशिश करते हैं और यह ही अस्बात हैं - Positive पाजीटिव है - बरख़िलाफ़ उस के सिवा जो मायावी सुरकिकब, मिलौनी की और संसारी चीजें हैं उन से हट जाने की कोशिश करते हैं - यह नफी यानी निगेटिव Negative है। अब ज्ञान और विज्ञान का काम है कि जात को न पहिचाने और बिल्कुल न जान सके। बाकी दूसरी चीजों के वास्ते उस का यह काम है कि जो जैसी दर्जा और मर्तबा की है - उस को वैसा ही पहिचाने। तो साबित यह हुआ कि जात और सत पद को जानने का इरादा करे - और बाकी दूसरी मायावी चीजों के न जानने का, नहीं तो सालिक काम से दूर जा पड़ेगा। इसलिए सच को सच और झूठ को झूठ साबित करना ज्ञान और विज्ञान का काम है। नतीजा यह होता है कि ज्ञान शक्ति - जात मुकद्दस और सत पद को यह साबित करती है कि वह नहीं जाना जाता, मगर है, और बिला शक है। इस तरह पूरे यकीन का हो जाना शहूद या दृष्टि कहलाता है और यह ही जात का शहूद है, जो साबित हो गया। शहूद जात के मानी हैं कि जात के सिवाय बाकी - और सब की जो कुछ कि है उन से गीबत हो जाए - और उनकी तरफ तबज्जुह न रहे। तजल्ली जात के यह मानी है कि यह सब दिखलाई देने वाली बातें भी अन्तरी

आँख से ओझल हो जायें। तजल्ली जात सत के प्रकाश को कहते है - उस में रंग और रूप नहीं होता बल्कि ज्ञान की रोशनी से मुराद है। माइयत जात से यह मुराद है कि जुमला चीजों की मुहब्बत जाती रहे और माया और मोह कुछ न रहे। मार्फत जात के यह मानी हैं कि जुम्ला अस्बाब में नाआश्ता हो जाए क्योंकि परमात्मा का ज्ञान सिर्फ नाम और कर्म के ही मुतअल्लिक हो सकता ए और परमात्मा के गुण कर्म स्वभाव और नाम ही का इल्म और पहिचान हो सकती हे - असल जात की नहीं और यह ज्ञान भी सिर्फ इस ही हद तक हो सकता है, कि फलाँ-फलाँ बात पैदा हुई मगर इस की वजह कि क्यों पैदा हुई नहीं हो सकता क्योंकि वजह मालूम करने का दरवाजा बन्द है - और वजह दरवाजा बन्द होने की यह है कि जो कुछ और जिस चीज की वजह हो सकती है और है - वह सब परमात्मा की हकीकत है - इस वास्ते कि परमात्मा हकीकतों की हकीकत है और इम हकीकत की बाबत जान लेना किसी आदमी और देवता वगैरह का काम नहीं है - पस किसी चीज की हकीकत समझ में नहीं आ सकती - और यही असली ज्ञान है और सब से बढ़िया ज्ञान है किसी ने क्या अच्छा कहा है -"मैंने यह जाना कि कुछ नहीं जाना"। एक और बात क्या मजे की किसी साहब ने कही है। "अबाम का अव्वल खवास का आखिर है।" मतलब यह कि आम लोग बिल्कुल नावाकिफ होते हैं - और यह ही नावाकफियत और नादानी कामिल और पहुँचे हुए लोगों की आखिर की बात है - यानी "ज्ञानी लोग यह जानते है, कि वह कुछ नहीं जानते"।

अब सब लोगों को यह मालूम होना चाहिए कि जो कुछ ऊपर बयान किया गया है - यह सब बातें सिर्फ अभ्यास के दर्जे और

उसकी तरकीबें इस्तलाहें और परिभाषा बयान की गई हैं - मगर हिम्मत जो चीज है बह दूसरी चीज है। हिम्मत में यह सब झगड़े अलग रहते हैं।

हिम्मत लफज के मानी रूहानी ताकत - इच्छाशक्ति (Will Power) के हैं। इस हिम्मत के हासिल होने के लिए चेला गुरु का सतसंग किया करता है जो धर्म के मुताबिक है। गुरु की मदद सामने-सामने हो या दूर हो-इसी हिम्मत की वजह से हो सकती है और हुआ करती है और गुरु की तवज्जुह और हिम्मत से चेले पर फैज और बख्शीश के दर्वाजे खुलते हैं।

यह सतसंग का तरीका सब से उम्दा और सहज और जल्द फायदा पहुँचाने वाला है। अकसर नादान लोग ऐसे रास्ते को ढूँढ़ते रहते हैं कि बिला मुरशिद के कोई बात हासिल हो जावे। सूफी लोगों का यह कौल है कि जिस आदमी का कोई शेख या गुरु नहीं है - उस का गुरु शैतान है। इसलिए हर दिल रखने वाले को चाहिए कि शेख कामिल ढूँढ़े। लेकिन इसी जगह पर यह बड़ी मुश्किल पड़ती है कि आम लोग यह नहीं तमीज कर सकते हैं कि मुर्शिद अच्छा है या बुरा और न उन को यह मालूम हो सकता है कि यह मुर्शिद वली भी है या नहीं। न यह मालूम हो सकता है कि यह साहबे हिम्मत भी है या नहीं। वह फसादी को नेक और नेक को बुरा समझ कर दोनों सूरतों में गलती में पड़ जायगा।

हजरत शेख शरुफुद्दीन मुनेरी यह बयान करते हैं कि ईश्वर की मर्जी हमेशा ऐसी ही रही है कि कोई जमाना बुज़ुर्गों से खाली नहीं रहा है - और न आयन्दा रहेगा - अब तक सच्चे जिज्ञासु के लिए यह

लाजिमी है कि जो बुजुर्ग इस वक्त इन रास्तों पर चलते हों - और इस काम के लिए मशहूर हों - उनके पास जाय और अभ्यास को करे और मुद्दतों तक उनकी खिदमत में हाजिर रहे - और हर बार अपने दिल की खबर लेता रहे कि तरह-तरह के भ्रम और किस्म-किस्म के खयाल जो उसके दिल पर जमे हुए हैं - कुछ कम हुए या नहीं - और उनके संग में बैठ कर कुछ तबदीली हुई या नहीं या बदस्तूर जैसे पहले थे, वैसे ही हैं। अगर खतरों और भरमों से कुछ छुटकारा मिले, तो ऐसे शख्स के दर्वाजे को, जहाँ से यह दौलत मिली है, मजबूत पकड़ ले और जान ले कि थोड़े दिन के संग से तो यह दौलत मिली है, तो जियादा सोहबत से बहुत कुछ उम्मेद है, और अगर कुछ तबदील बदल अपने हाल में न पावें तो जान ले कि इस बुजुर्ग के यहाँ मेरी किस्मत का कुछ हिस्सा नहीं है। फिर अपनी दवा दूसरे दर्वाजे से तलाश करे, और अपने दिल में इस पहिली जगह का भी इनकार न लावे, कि यह अदब से दूर है।

जब सच्चा जिज्ञासु किसी बुजुर्ग के पास अभ्यास सीखने को हाजिर हो तो उस बुजुर्ग को चाहिए कि लगातार तीन दिन तक उसको व्रत रखने की हुक्म दे, अगर हो सके तो बिल्कुल भूखा रक्खे, नहीं तो फल और दूध खाने को बतलावे। अगर मुसलमानी मजहब रखता है तो हजार मर्तबा "लाइलाहा इललिल्लाह" और इस्तगफार और दरूद शरीफ पढ़ता रहे। तीसरी रात को नहा धोकर शेख की खिदमत में हाजिर हो और पीर मुरीद को हुक्म दे कि के फातहा - और इखलास और इस्तगफार वगैरह पढ़ कर उसके सामने दो जानू बैठे, और फिर शेख यह बात कहे कि "तूने बैत की मुझ जईफू के हाथ पर, और मेरे बुजुर्गों के हाथ पर, और हजरत

पैगम्बर सल्लेअलह व आलही वसल्लम और हजरत रब्बुलइज्जत के हाथ पर, और तूने अहद दिया कि अपने सब जिस्म के जोड़ों को सीधे और सच्चे धर्म पर रखेंगे, और दिल को अल्लाह ताला की मुहब्बत में देंगे। इस वक्त में अपना दाहिना हाथ मुरीद के दाहिने हाय पर रखे, फिर मुरीद यह कहे कि मैंने बैत की और इकरार किया कि धर्म के तरीके और रास्ते पर रहूँगा, और खुदा की मुहब्बत में अपने दिल को दिया।" "उसके बाद खुरका पहिना दे।" फिर मुरीद को अकेले में सामने बैठा कर इस तरह पर कि दूसरे को खबर न हो, जो उस मुरीद के मुआफिक हो, जिक्र सिखावें। लेकिन हमारे मुर्शिद साहब का यह तरीका था कि अहल हिन्दू को आम तौर पर, और मुसलमान साहिबे को खासकर पहिले बैत नहीं फरमाते थे बल्कि एक अर्से तक इसका जिक्र भी नहीं फरमाते थे, और न इशारे से भी जाहिर करते थे, बल्कि जब कभी यह मालूम फरमाते थे कि मुरीद में अब ख्वाहिश बैत की है और इस को कुछ तरीका आ गया है, और इस काम में चल निकला है, और शौकीन भी है और खुद ख्वाहिश बैत की करता है तो बैत फरमा लेते थे। और न व्रत वगैरह कुछ रखवाते बल्कि कई महीनों और बरसों तक उसको बिला तकल्लुफ निहायत खुशी से सिखाते रहते थे और बैत हा जाने वाले मुरीदों, और बिला बैत किये हुए मुरीदों में कुछ फर्क नहीं समझते थे। अगर तमाम उम्र कोई ख्वाहिश बैत की न करता तो उसी तरह उस की तरफ रुजूअ रहते, और बिला तमीज और दुई के हर तरह की तालीम फरमाते रहते थे। अलबत्ता देखा गया कि जो बैत कर चुके हैं उन्होंने अगर बैत करने के बाद कोई ऐसा काम किया है जो धर्म और तरीके के खिलाफ होता था तो उससे रंजीदगी जाहिर फइमाते और कभी-कभी जाहिर तौर पर खफा हो जाते, मगर दूसरे साहीबान से

नाराज नहीं होते थे - इतना ही फर्क समझ लेना चाहिए। खैर यह मजमून दूसरा हो गया। अब असली बात पर आता हूँ। जानना चाहिये कि जिक्र को मराकिबे पर मुकद्दम रखना चाहिए, यानी जाप को पहिले कर लेना चाहिए तब मराकिबा और फिक्र की तरफ तवज्जुह दिलाना चाहिये, जिक्र और जाप जियादा जरूरी है, और उसी को पहिले शुरूअ करना चाहिए। बाजे बुजुर्ग पहिली-पहिली ही मर्तबा मुराकिबे का हुक्म दे देते हैं, पस अगर मुरीद की स्तैदाद इस लायक है और उसका ऐसा संस्कार है तो ऐसा करा देना चाहिए - लेकिन सच बात और अच्छी यह है कि अभ्यासी को पहिले जिक्र और जाप से रंगीन कर दे, और जोश और खरोश में लावे - उसके बाद उसका मुराकिबा और फिक्र से धीमा करे, और ठहराव और आराम दे। जिक्र और जाप में भी यह देखना पड़ता है कि किस आदमी को किस किस्म का जाप मुफीद हो सकता है, मसलन जब कोई शख्स दुनियाँ की तरफ ज्यादा रगबत रखता हैं - तो पहिले पहिल उस को नफी अस्बात कराना चाहिये। जिसमें कि कुछ इश्क और प्रेम की बू मालूम पड़े तो उसको इस्म जलाली यानी अल्लाह का जिक्र सिखावे। जिसकी तबिअत में नर्मी हो और दिल बे तअल्लुक हो, और आजादी जियादा पाई जाये - तो उसको हू का हुक्म दो, इसी तरह हर मौके को देख ले, क्योंकि हर किसी के लिए एक ही तरीका और एक ही अभ्यास काम नहीं देता है जिस की तफ़सील आयंदा की जावेगी।

यह जरूरी नहीं है कि जिक्र और जाप की हजारों की तादाद बतलाई जावे या फिक्र और समाधि की हजारों किस्में लिख दी जावें, क्योंकि यह किताब इस काम के लिये नहीं है बल्कि गर्ज

यह है कि जिक्रों में से वह जिक्र जो बतौर निचोड़ के हों, और मराकिबे और समाधियों में से जो तरीके मगज और गूदे की मिसाल हों और जो हर काम में आ सकें और मुफीद मतलब हों, लिख दिये जायें क्योंकि जो कोई ऊँचे दर्जे की बातें पूरी करेगा - उसको नीचे दर्जे की बातें भी आ जावेंगी।

"तरीका नफी अस्बात चार जरबी का" -एक छोटी कोठरी जिसमें अँधेरा हो - मुरब्बा यानी सिद्ध आसन पर बैठे और पीठ सीधी रखे, आँखों को बन्द कर ले, दोनों हाथों को दोनों जाँघों पर रखे - दाहिने पांव के अंगूठे, और उसकी उंगली से जो उससे मिली हुई है, बायें पांव की रग के मास को जोर से पकड़े, ताकि कल्ब के अन्दर हरारत पैदा हो जाए - जिसकी वजह से सफाई हो जाती है। और इस हरारत की वजह से वह चरबी जो दिल के चारों तरफ रहती है पिघल जाती है, और वसवसा और खतरे कम हो जाते हैं। उसके बाद एक दिल और एक जबान होकर जैसी तबीयत और वक्त हो - जोर-जोर या हल्के-हल्के जिक्र और जाप में लग जाए, और जिक्र करते वक्त नीचे लिखि हुई बातों को साथ-साथ अमल में लाये।

(1) गुरु की सूरत को सामने रखना (2) ईश्वर का खयाल (3) उसके गुणों का खयाल रखना। यानी:--

जिन्दगी, ज्ञान और शक्ति और इरादा यानी इन्द्र-देवता, सुनने-देखने और बोलने के देवताओं का खयाल रखना, और (4) जरब या ठोकर या जोर लगाने से यह मुराद है कि तरकीब इसकी इस तरह पर है कि लफज "ला" को बायें जानू के शुरुअ ऊपर की तरफ खींचे-और लफज "इलाह" को दाहिने मुढें तक, और फिर यहाँ

से सांस को सीधा करके लफज “इललल्लाह” की ठोकर जोर से दिल पर मारे, इसका नाम जिक्र चार जरबी है। मगर हम लोगों को इस तरह बतलाया गया है कि सीधे आसन पर बैठ कर, पीठ सीधी रख कर जबान और आँखों को बन्द करके, और फिर खयाल के साथ लफज “ला” को नाक या उसके नीचे से उठावे, और दिमाग की चोटी तक लेजा कर लफज “इल्लाह” को दाहिने कंधे की तरफ ले जाए - इललल्लाह को बाई तरफ दिल पर जोर से सांस के साथ छोड़ दे। और यह भी बतलाया गया है कि लफज “ला” को दिमाग तक ऊपर ले जाते वक्त यह खयाल करें कि जो कुछ दिखाई पड़ता है कुछ नहीं है और न मैं हूँ - और दाहिने कंधे की तरफ “इलाह” का खयाल करके यह खयाल करे कि हाँ कुछ है और वह इललल्लाह यानी सिर्फ परमात्मा है, जो दिल पर छोड़ दे, और इस का ऐसा तार बांध देवे कि बेहोशी हो जाये।

मालूम होना चाहिए कि खतरे या खयालात जो दिल पर आते हैं वह चार तरह के होते हैं (1) एक खतरा शैतानी है जिससे गरूर, गुस्सा, अदावत, हसद, डाह वगैरह पैदा होते हैं (2) दूसरा नफसानी है जिससे खाने की ख्वाहिश और शहबत, और माल जमा करने की हिर्स, और अपने आपको सँवारने और बनाने की हविस वगैरह पैदा होती है (3) तीसरा खतरा मलकानी है, जिसका देवताओं से सम्बन्ध है - यानी दैविक कहलाते हैं - इससे नेकी करने के खयालात मसलन पूजा-पाठ करना वगैरह पैदा होते हैं (4) चौथा खतरा रहमानी है, इससे खालिस “हू” यानी ऊपर और अन्दर एक सा हो जाना - मुहब्बत और प्रेम का पैदा होना - और परमात्मा से मिलने का शौक बढ़ना। इन सब की जियादा तफसील मैंने किसी

दूसरी किताब में लिखी है - और यहाँ इस वजह से नहीं लिखी जाती कि जियादा तूल देने से आदमी परेशानी में पड़ जाता है।

बाएं घुटना की तरफ शैतानी खतरे के दूर करने का मौका है - क्योंकि यहाँ पर शैतानी खतरों के रहने की जगह है और दाहिने जानू यानी घुटने की जगह पर नफशानी खयालात के रहने की जगह है और इस जगह से इस किस्म के ख्यालों को दूर करते हैं।

आदमी को बहकाने और अच्छे काम की तरफ से हटा देने और विघ्न डाल देने के लिए नफस और शैतान का साझा रहता है। दाहिना कंधा खतरा मलकी यानी देवी खयाल के दूर करने का मौका और जगह है - यहाँ दाहिना फरिश्ता और देवता अच्छे संस्कार बनाने का रहता है और दिल का आकाश खतरा रहमानी के रहने की जगह है। इस वजह से जिक्र चार जरबी यानी चौमुखा जाप करने को तजबीज किया गया है। बाज बुजुर्ग यह कहते हैं कि इस को अंत में सिखायें क्यों कि मिहनत और सफर का कम करना अच्छा है और यह बात जरूरी है कि जो अम्यासी हिन्दू हो तो उस को हिन्दी जबान में तालीम करे और अजमी हो तो फारसी में और अंग्रेज हो तो अंग्रेजी में और बंगाली हो तो बंगाली में। अरबी के लफज बतलाना जरूरी नहीं है। यह कौल हजरत शाह कलीमुल्लाह साहब जहानाबादी का है जो बड़े जबरदस्त बुजुर्ग हुए हैं।

"जिक्र दो जरबी यानी दो मुखा जाप":- यह है कि हर सांस में दाहिने कंधे पर "ला इलाह" की एक जरब - और दिलके ऊपर "इल लल्लाह" की दूसरी ठोकर मारे - और जब 3 या 5 या 9 मर्तबा कहले - तो एक दफा "मुइम्मद रसूल अलाह"। ला के मानी है

“नहीं” इल्लाह के मानी “सिवाय” और इल्ललाह के मानी हैं “परमात्मा के”। तर्जुमा यह है कि “सिवाय परमात्मा के और कुछ नहीं है।“ एको ब्रह्म द्वितीय नास्ति। न मैं हूं और न यह दुनियाँ है, सब नाशवान है - जो आखिर में बाकी रहेगा वह सिर्फ परमात्मा रहेगा। - फिर इसकी तालीम इस तरह पर है : - कि “ला” कुछ नहीं है - मगर मेरा माबूद यानी जिस के आगे सर झुकाया है - उपासना करे - वह तू है। फिर ला जो कुछ दिखाई देता है वह सब नाशवान है मगर मेरा मकसूद - यानी जिस के पाने का इरादा किया है वह तू है। इस के बादला कुछ नहीं हैं - मगर मेरा मतलूब - यानी जिस को हम चाहते हैं वह तू है। इसके बादला कुछ नहीं रहेगा - मगर मौजूद तू है यानी जो कुछ बाकी रहेगा वह तू है।

मालिक के दो रूप कहलाते हैं - एक साकार दूसरा निराकार। निराकार बिला नाम रूप और रंग के है - साकार नाम रूप रंग सहित है। निराकार जात मुतलक है यानी उस की कोई सूरत नहीं है और अपना आप आधार है। साकार के नाम रूप और गुण हैं, यानी सिफत और खासियत है। उसका नाम रूप और शक्ल, रज, तम और सत, ब्रह्मा-विष्णु और महेश हैं। परा प्रकृति और अपरा प्राकृति मय आत्मा के मिलौनी के जीवात्मा कहलाती है। महत्ततत्व पहिली शक्ल है। इसमें तमाम गुण मौजूद हैं। असल में मुसलमान बुजुर्ग इस को मुहम्मद रसूलल्लाह सललल्लाह अलह व आलह व सल्लम मानते हैं। इसी लिए इस जिक्र और जाप में पहिले जाती या असली निराकार का जाप बतला कर, फिर आखिर को साकार का एक मर्तबे जाप बतलाते हैं। जिसका मतलब यह है कि पहिले निराकार फिर साकार है। और नीचे की तरफ से पहिले साकार है

और फिर निराकार है। पहली सीढ़ी दुनियाँ की तरफ से ऊपर को प्रकृति है जिसकी असल और जड़ महत तत्व है। पस जहाँ जिस्म नहीं है - वहां रूह कहां रहेगी - और मालिक वह कहलाता है जिसके लिए मिल्क यानी जायदाद हो, लेकिन जायदाद भी जब ही है - जब मालिक है। इसीलिए जिक्र और जाप में दोनों बातों को साथ-साथ ले लिया है। यह दो मुखा जाप - बनिसबत चौमुखे जाप के फैलाव ज्यादा रखता है। इस वजद से इस में बीच-बीच में तफरका और विघ्न नहीं पड़ता है -और न तबीयत परेशान होती है। चूँकि लम्बा चौड़ा मजमून सोचने और काम करने में जहन इधर उधर परेशान हो जाता है।

"जिक्र लकलका" - यह है कि अल्लाह का लफज आहिस्ता बिल्कुल नजदीक मुँह खोल कर या बन्द करके कहे। बाज लोग इस वक्त हबस नफस यानी सांस को रोक लेते हैं और बाज नहीं रोकते।

"जिक्र सहपाया" - यानी तीन पेरों का जाप - यह मिस्ल तिपाई के है - जिस में कि एक पाया न हो तो फिर वह खड़ी नहीं रह सकेगी, इसलिए इस जाप में तीन बड़े काम हैं-

(1) पहिला इस्म जात के यानी वह नाम है जिस में गुण नहीं शामिल है इस का जिक्र करे और फिर

(2) दूसरा इस्म सिफात - यानी वह नाम जो गुण के सहित हों मसलन ज्ञानी - सुनने वाला - देखने वाला - ऐसे नाम को जाप में खयाल किया जाता है।

(३) तीसरा वास्ता है जिसको दरमियानी या (medium) मीडियम कहते हैं और इसको बरजख भी कहते हैं - इसलिए इस जाप में सात बातों का खयाल रखा जाता है। यह सब सिफाती हैं यानी गुण सहित हैं - और इन से जिज्ञासु में हर वक्त जौक लगाव और शौक पैदा होता रहता है।

1. बरजख मानी दर्मियानी से यहाँ गुरु की शकल से मुराद है। यह ही सबसे बढ़िया वास्ता है।

2. इस्म जात यानी अल्लाह या हू या ओम् का जाप करना।

3. जानने वाला - सुनने वाला - देखने वाले से है इन सब का खयाल रखना।

4. अल्लाह के अलिफ को खूब तूल दे।

5. अल्लाह के हमजा को जोर से नाफ़ के नीचे से शुरूअ करे।

6. अल्लाह के आखिर को दिमाग में जाकर खतम करें

7. अल्लाह के लफ्ज को खूब तशदीद दे।

इन सब बातों को जबानी मुर्शिद से समझे - किताब से हासिल नहीं होता। इस ताप के करने का तरीका यह है कि इस जाप को बिला सांस के रोके हुए नहीं करते हैं।

अल्लाह के हमजा को नाफ़ के नीचे से जोर के साथ खींचे

- और तमाम सांस को सीने की तरफ लेकर बंद करे और दिल में अल्लाह कहे और उसके साथ समीअ कहे जिसके मानी हैं कि वह ही सुनने वाला है और उस के मानी को खयाल करे - फिर अल्लाह कहे - और उसके साथ बसीर कहे - जिसके मानी हैं देखने वाले के - और उसके मानी का खयाल बांधे। फिर अल्लाह कहे और उसके साथ अलीम कह कर उसके मानी को खयाल करे - उस को उरुज यानी चढ़ाव कहते हैं।

इसके बाद उसको इस तरह कहे कि पहिले अल्लाह के साथ अलीम फिर बसीर और फिर समीअ कहे। इस को उतार कहते हैं।

इसके बाद फिर समीअ फिर बसीर और फिर अलीम अल्लाह के साथ कहे यानी यह कहना दूसरा चढ़ाव कहलाता है इसको उरूज सानी कहते हैं इसी तरह फिर उतार-चढ़ा करता हुआ इस कदर हब्स दम करे और सांस को रोके कि दो-तीन जाप यानी ढाई सौ तक कर सके, तो करे ताकि अन्दर गर्मी पैदा हो जाए और अन्दर के संकल्प विकल्प जल जाऐं-और खयाल आना बन्द हो जाए और बेहोशी होने लग जाए।

उतार व चढ़ाव में भेद है कि सुनने का मण्डल देखने के मण्डल से कम है और देखने का मण्डल-जानने के मण्डल से कम है इसलिए पंथाई पहिली हालत में बुद्धि और शहादत के मर्तबे में होता है, और यह मर्तबा सब मर्तबों से बहुत तंग है। इनके बाद जब सुनने को पहिले करेगा तो इससे बढ़कर सूक्ष्म अवस्था को पहुँचेगा जो पहिले से जियादा मर्तबा है। फिर देखने का मुकद्दम करे तो जब इस

से बढ़ कर कारण अवस्था को पहुँचेगा। उसके बाद जानने के दायरे को मुकद्दम करे, और फिर उलट पलट करता हुआ चले इस जाप को उस्ताद के पास मालूम करना होगा। बिला उस्ताद के किताब देखकर समझ में नहीं आ सकता। इस उलट फेर का मतलब यह है जैसा कि गीता में आत्म रूप दर्शन और विराट रूप का भाव समझाया गया है कि एक तरफ से आत्मा का मण्डल सब तत्वों के ऊपर है और एक तरफ से आत्मा का मण्डल सब तत्वों के नीचे है। जिसने ब्रह्म विद्या-तत्व और सांख्य शास्त्र का खूब विचार किया है वह ही इसकी असली वजह को समझ सकता है। देखा जाता है कि संध्या करते वक्त ओम् का लफज पहिले कह कर फिर चक्षु-चक्षु ओम् नाभि-नाभि ऊँ श्रोत्रम् श्रोत्रम् कहा जाता है यह इसी तरह इस जाप में अल्लाह अलीम, अल्लाह बसीर, और अल्लाह समीअ कहा जाता है यह उतार है। और फिर अल्लाह समीअ, अल्लाह बसीर और अल्लाह अलीम कहा जाता है और यह चढ़ाव है।

नाफ़ के नीचे से शुरू करने में बहुत से फायदे भी हैं और बहुत से नुकसान भी हैं। मगर बिला नाफ़ के नीचे से जाप करना कुछ ज्यादा अच्छा नहीं है और बिला इसके कर भी नहीं सकता है।

जाप करने वाले को यह चाहिए कि बहुत ज्यादा हर्ज और नागा न करे। इसको करता जाए और खान-पान की और निगाह रखे तो नुकसान नहीं होगा।

सूफियों का एक तरीका सत्तारिया कहलाता है। इस तरीके में सत नाम को जबान या दिल से कहते हैं और गुण सहित नामों को अपने खयाल और ध्यान में जमाते हैं। गुण सहित नाम यह है कि वह

सुनने वाला है वह देखने वाला है और वह जानने वाला है। अपने गुरु की सूरत को सामने रखते हैं। सत् नाम के जाप को नाभी के नीचे से शुरू करके तालू तक ले जाते हैं। इसकी दो सूरतें हैं। पहली सूरत यह है कि इस जाप को एक साँस में एक मर्तबा करते हैं। दूसरी सूरत यह है कि इसको एक साँस में सौ मर्तबा करते हैं। ऊपर के चढ़ाव और नीचे के उतार की सूरतों को बारी-बारी से करना चाहिए जैसा कि ऊपर बयान किया जा चुका है। जुमले कबीर यानी दूसरी सूरत को जब करे तो उसको इस तरह करना चाहिए कि अपने गुरु की शकल सूरत का खयाल जमा कर साँस को रोककर जाप करे यहाँ तक कि बेहोशी और बेखुदी आ जाए। जो लोग बहुत भूखे रहते हैं और बहुत ज्यादा जागते है और अभ्यास तरह-तरह के करते रहते हैं उन लोगों के और जल्दी इस तरीके के करने में काम बन सकता है।

"जिक्र और जाप शिश जरबी" - जिसको ६ पहलू वाला जाप कहते हैं - नाम के जाप को पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्खिन-आसमान की तरफ और जमीन की तरफ करते हैं।

अगर अभ्यासी यह चाहे कि मुझको वेद और शास्त्र के असली और गूढ़ मानी मालूम हो जाये या कि मुझको रूहों का हाल मालूम हो जावे तो उसको चाहिए कि इस जिक्र को करे मगर विला गुरु की शक्ल के खयाल बाँधे हुए कोई फायदा नहीं हो सकता है।

"जिक्र हदादी"-यह इस तरह किया जाता है कि ला इलाह को खींच कर गुरु की शकल का खयाल बाँध कर बायें तरफ से शुरु करे और दोनों घुटनों के बल खड़ा हो जावे और फिर इललल्लाह के लफज को खूब जोर से दिल की फिजा यानी आकाश पर ठोकर

लगाकर बैठ जाए जैसे कि लौहार दोनों हाथों से हथौड़ा लोहे पर जोर से मारता है। इस तरह यह जाप इतना करे कि लगाव और आनन्द पैदा हो जाए उसमें मिहनत बहुत है।

"पास अनफास"- इसके जिक्र और जाप का तरीका यह है कि लफज लाइलाह को साँस के साथ बाहर निकाले और लफज इललल्लाह को साँस के साथ ऊपर खींचे और हर जाने आने वाली साँस के साथ ऐसा ही करता रहे और तार बाँध दे और नजर अपनी नाफ़ पर रखे-और इतना जाप करे कि सोते और जागते में खुद ब खुद अभ्यास जारी रहे। इस तरह उम्र दोगुनी हो जाती है।

"जिक्र अर्रा"- यह दूसरा तरीका पास अनफास का है। अल्लाह के ह को पेश पढ़े इस तरह कि बाउ पैदा हो यानी अल्लाह हू का लफज निकले और साँस को खींचने के वक्त अल्लाह साँस लेते से कहे गोया वह साँस दिल की जबान है और साँस निकलते वक्त हू साँस से कहे इसका तार बाँध दे। अगर नाक की राह से आवाज पैदा हो जाए तो इसको नाक का अर्रा कहते हैं। इस जिक्र अर्रा से बहुत सोजिश और जलन और दिमाग में बहुत हरारत और खुराकी पैदा हो जाती है। अगर ऐसा हो तो नाक और दिमाग पर रोगन बादाम स्तैमाल कर सकते हैं। इस जिक्र का कमाल पैदा करे और पूरा हो जाना उसका यह है कि बे खबरी की हालत में जाकिर रहे।

"जिक्र सीना बसीना" - इसका अमल इस तरह पर है कि अगर किसी सादा आदमी को जिसके दिल पर कोई जाप और समाधि वगैरह का कोई असर अब तक नहीं पड़ा है मुर्शिद अपने

सामने उसको घुटने से घुटना मिलाकर बिठलावे और उसको हुक्म दे कि अपनी ठोढी को सीने पर रखे और कमर को पेट की तरफ और सीने को उभार कर बैठे और आँख को बन्द कर ले। मुर्शिद उसकी साँस को टटोल कर यह करे कि जब वह आदमी अपनी साँस को अन्दर की तरफ खींचे तो मुर्शिद अपनी साँस को उसकी साँस पर छोड़ दें। और जब उसकी सांस बाहर निकले तो मुर्शिद अपनी सांस अन्दर खींचे। अगर यह ही तरीका थोड़ी देर तक करता रहेगा तो फिर एकाएकी मुरीद में सोजिश पैदा हो जायगी और मुर्शिद का जो मुकाम गालिब होगा वह मुरीद की जबान और साँस से जारी हो जायगा जिससे लोगों को हैरत होगी। और इस कदर तेजी हो जायगी कि जिसकी गर्मी से मुरीद के कान और नाक से खून जारी हो जायगा। इसको जिक्र सीना ब सीना कहते हैं। लेकिन अगर सीखने वाला किसी जाप या समाधि में लग गया होगा खासकर उस सूरत में जब उसने साँस को रोक लिया होगा तो फिर कोई तदबीर काम में नहीं आवेगी बल्कि उस मुरीद की बेखुदी का असर मुर्शिद पर पड़ेगा।

"जिक्र कश्फ रूह" - कोई रूह हो और जहाँ हो पहले २१ मर्तबा यारब कहे फिर या रूहुलरूह कहे और दिल पर ठोकर मारे फिर सर उठा कर या रूह माशा अल्लाहु कहे। जब जिक्र से फुरसत पावे तो जिस आदमी की रूह से मतलब हो उसकी तरफ मुतवज्जह हो। इसके बाद सोते में या जागते में किसी वक्त वह रूह हाजिर होगी। अगर दो हजार मर्तबा यह अमल करेगा तो जल्द मतलब निकल आएगा।

"जिक्र हां-हू-ही" इस जिक्र में हां-हू-ही कह कर पहिली ठोकर दाहिनी तरफ और दूसरी बाई तरफ और तीसरी दिल पर मारते हैं।

"जिक्र कश्फ कबूर" - यह वह जाप है जिससे कि कबर के अन्दर मुर्दा की रूह सामने आ जाती है या उसका हाल मालूम हो जाता है कि मरने के बाद उस की क्या हालत हुई। तरीका यह है कि कबर के पास बैठे और आसमान की तरफ मुंह करके "अकिशफुली या नूरो" कह कर दिल पर ठोकर लगाए और "अकिशफुली" कह कर मुर्दे के मुँह के मुकाबिले में कबर पर ठोकर मारे खयाल से और उसके बाद "इनिहाला" कहे तो जाहिर जहूर या सोते में मुर्दे का हाल मालूम हो जायगा। मुसलमानों में मुर्दे का मुँह पच्छिम की तरफ हुआ करता है।

"जिक्र कबूले दुआ"- जिक्र या जाप दुआ कबूल होने के लिए इस तरह पर किया जाता है कि पहिले "यारब" कह कर दाहिनी बगल पर मारे फिर "यारब" कह कर दिल पर इसके बाद "या रब्बी" इस तरह से कहे जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। और यह जिक्र बहुत करे। जब इसको पूरा करना चाहे तो दानों हाथ उठा कर "या रब्बी" कह कर मुंह पर फेरे, और जो चाहता है, उस खयाल को दिल में बनाए रखे।

"जिक्र असली फकीर नक्श बन्दिया" - तरीका जिक्र या जाप नक्श बन्दिया फकीरों का यह है कि पहिले जबान को तालू में लगाए और फिर साँस को रोक ले-और नाफ़ यानी नाभि से "ला" को शरूअ करके खयाल के साथ दिमाग तक पहुँचाए - इसके बाद

"इल्लहा" को खयाल के साथ दाहिने कंधे की तरफ ले जाये-और "इल्लिल्लाह" के साथ बाऐं कंधे की तरफ ले जाकर दिल पर जोर से (जरब) ठोकर लगाए। इसके आसार तमाम जिस्म पर जाहिर हो जाना चाहए जाप जिक्र की सूरत यह है।

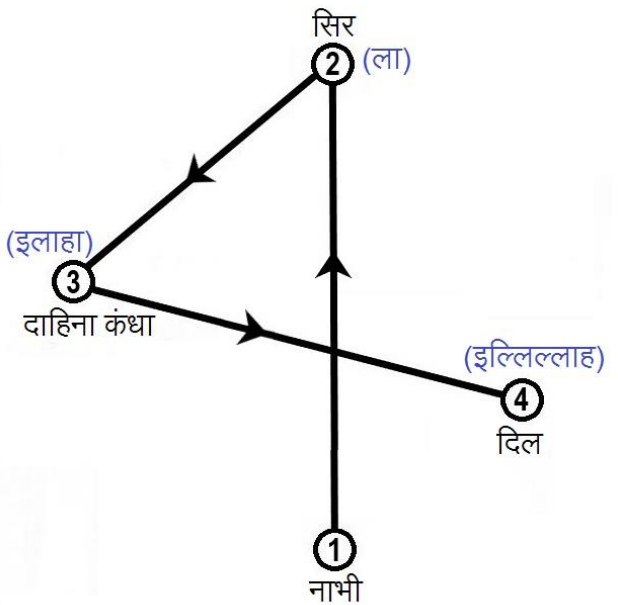

इस जाप की सूरत के मुवाफिक जाप करने वाला अपने आप को मिटा हुआ और सत को मौजूद साबित करे। मतलब यह है कि "ला" के मानी नहीं के हैं यानी न दुनिया है और न कोई चीज है और न मेरा जिस्म है। इसलिये लफज "ला" को खयाल करके दिमाग तक ले जाते हैं। यह खयाल करते हैं कि पिण्ड से ब्रह्माण्ड तक कुछ

नहीं है। सब को लय करना होता है। जब लय अवस्था को दिमाग और ब्रह्माण्ड तक पहुंचा देते हैं तो फिर दाहिने कंधे पर करते हैं और वहाँ से अब खयाल को फिर वापिस लाते हैं यानी दिल पर खयाल की ठोकर लगा कर साबित करते हैं कि दिल में वह ही - "सत ही सत" मौजूद है। नाभि से उठाने और दिमाग तक पहुँचने फिर दाहिने कंधे की तरफ ले जाने और बाई तरफ वापिस होकर दिल पर जरब लगाने में जाहिर जहूर जिस्म को नहीं हिलाना चाहिए, बल्कि यह सब बातें खयाल से करना चाहिए। जाप बराबर जारी रखना चाहिए और खत्म करते वक्त दिल की जबान से मुहम्मद रसूल अल्लाह कहना चाहिए। इस जाप के करने का यह फायदा है कि जब लय करना है - लय हो जाता है और जब मौजूद करना है मौजूद हो जाता है। अगर इस अमल को २१ मर्तबा कहने के बाद भी कोई असर मालूम न हो, और बेखुदी और महबियत जाहिर न हो, तो फिर नये सिरे से इस को शुरूअ करना चाहिए और यह समझे कि किसी शर्त के अदा करने में गलती हो गई है, वर्ना यह जिक्र जरूर अपना असर दिखलाता।

एक तरीका यह दूसरा है कि नफी अस्बात दो जरबी या चार जरबी यानी लय और स्थिति का जाप दो या चार तरफ का करे।

"जिक्र मजे के दूर करने का": - यह जिक्र इस तरह होता है कि दाहिनी तरफ "याअहद" कहे और बाई तरफ "या सम्द" कहे और दिल पर "या बतर" कहे।

"जिक्र ख्वाहिशात दुनियाँ के पूरे होने के लिये" - दुनियाँ

की चीजों, बातों और ख्वाहिशों के पूरे होने के वास्ते इस तरह जिक्र करे कि रात को दस बजे के बाद अकेली जगह में बल्कि खुली हुई छत पर जाकर हाथ-पैर धोकर - नंगे पांव खड़ा हो-और मुँह आसमान की तरफ करके हाथ ऊपर उठा कर 70 मर्तबा "या वहाब" पढ़े।

"जिक्र अकदाम" - यानी चलते हुए जाप करने में अगर जल्दी-जल्दी चल रहा है तो हर कदम पर इलल्लाह-इलल्लाह कहे। अगर आहिस्ता-आहिस्ता चल रहा है, तो दाहिना कदम उठाते वक्त "ला" कहे और बायां कदम उठाते वक्त इलाह कहे फिर दाहिना उठाते वक्त "इल्ला" और बायां उठाते वक्त "अल्लाह" कहे। जब इस तरह चले कि न तो जोर से चले और न बिल्कुल हल्के-हल्के बल्कि औसत दर्जे पर चल रहा तो, तो हर कदम पर अल्ला-अल्ला कहता हुआ चले।

मालूम हो कि ला इलाह इलल्लाह का जाप नासूती या जमीनी है - और इलल्लाह का मलकूती यानी दैवी है और अल्लाह का जबरूती यानी विराट रूप और मण्डल से सम्बन्ध रखता है - और हू का जाप लाहूती है जो तीनों गुणों के हद के पार है। हमारे मुर्शिद साहब सिर्फ अल्लाह का जाप शुरूअ कराते थे - और फिर हूर का। बल्कि पहिले के दो शायद कभी किसी जरुरत पर या भद्दी तबीयत जिस की होती थी - उस को कराते थे।

अब चन्द ऐसे जिक्रों और जापों को लिखा जाता है कि जो सीना बसीना बतलाये जाते हैं यानी किसी को जाहिर नहीं किये जाते हैं - और पोशीदा तौर पर बतलाये जाते है। जब अभ्यासी की

पूरी सफाई दिल की हो चुकती है और पूरी-पूरी मिहनत कर लेता है - और कमाल को पहुँच जाता है - तब यह जाप बतलाये जाते हैं। अगर अधूरा है और इन्तहा को नहीं पहुँचता है, तो ऐसे लोगों को बतलाना खतरा है।

जिक्र मैयत - जब देखे कि अभ्यासी को जाती और सिफाती मुशाहिदे में कमी है यानी साकार और निराकार दर्शन और साक्षात्कार करने में कमी रह गई है - तब इस जाप को बतलाते हैं। बैठक ऐसी बैठे जैसी कि नमाज में बैठते हैं - लेकिन दोनों पैर कूल्हे से बाहर निकाले रहे और दोनों कूल्हे जमीन पर रखे। दाहिने हाथ से बायां बाजू और बांए हाथ से दाहिने बाजू को खूब जोर से पकड़े और पांच जरबों में इन लफजों को कहे।

" जिक्र "या मुई या मुई या मुई या हू - या हू - या हू।" पहिली जरब दाहिने कदम और दाहिने जानू के दर्मियान - दूसरी जरब आसमान की तरफ - तीसरी जरब बाएं कदम और बाएं जानू के दर्मियान, चौथी जरब जिगर पर और पाँचवी जरब दिल के आकाश पर खूब जोर और ताकत से मारे, और खयाल करे कि हू से मुराद उस जात मुतलक से है कि जिसकी मिसाल कोई नहीं है, यानी बह सत पद है जो अपने आप आधार है, और उसका सानी दूसरा नहीं है। जितने दिन यह जाप करे, उन दिनों में सिर्फ दूध पिए और थोड़ी सी खीर उसमें मिला लिया करे और खुशबू और इत्र खूब लगाया करे। बाज बुजुर्ग इस को इस तरह बतलाते हैं कि सिर्फ तीन तीन मर्तबा हू हू या मुई मुई कहते हैं। इन लोगों की बैठक भी इसी तरह की है, जो पहिले बतलाई गई है, मगर इतना फर्क है कि हू हू

की जरब आसमान की तरफ और या मुई की जरब दिल पर लगाते हैं। इनके अलावह सैकड़ों तरह के जिक्र और जाप और भी हैं, वह यहाँ नहीं लिखे जाते जिन को जियादा शौक हो, वह किताबों को देख सकते हैं।

अब मैं उस खास जिक्र और जाप को लिखता हूं, जो कि हजरत मौलाना मख्दूमना जनाब किबले मौलाना फजल अहमद खाँ साहब नकशबन्दी मुजदद्दी मजहरी रायपुरी ने हम सब लोगों पर दया करके तजबीज किया है। बाल्कि आप फरमाते थे कि आप पर यह जिक्र इल्हाम हुआ है। वाकई यह जाप, तमाम जापों में एक खास हैसियत रखता है, इसमें सब बातें एक जगह जमा कर दी गई हैं। जो करीब-करीब जुमला जरूरतों को पूरा कर देती हैं इस फकीर ने अपनी तमाम उम्र सिर्फ इसी को अपने वास्ते रखा है, और इसी पर किनायत कर ली है, और वाकई जो जो मुश्किलें पेश आईं, बह सब हल हुई, और निहायत शान्ति रही, और रूहानी तरक्की में बहुत जियादा मदद मिली। अब उसका तरीका नीचे लिखा जाता है।

सुबह को जब नहाया हुआ हो और साफ कपड़े हों, अकेले में जहाँ तक मुमकिन हो, अगर अकेले का मौका न मिल सके तो कोई हर्ज नहीं है। इस जाप और अमल को रोजाना किया करें। जहाँ तक मुमकिन हो सके किसी रोज छोड़ना नहीं चाहिए और न नागा करना चहिए। अगर सुबह न कर सके तो दोपहर को या शाम को, या रात को या सोते वक्त जरूर कर लेना चाहिए। बीमारी में नहाने की भी जरूरत नहीं है। अगर जिस्म कमजोर है और सर्दी का मौसम है,

तो भी नहाने की जरूरत नहीं है। हाँ, हाथ-पैर धो डालना चाहिए और कपड़े शुद्ध और साफ हों।

या फत्ताही दाहिनी तरफ को या रज्जाको बाई तरफ को या बहाबो सिर की तरफ को या अल्लाह दिल पर जोर से मारे। हमारे तरीके नक्शबंदिया मुजद्दिया मझहरया में इस तरह पर करते हैं कि 3 दौर कर लेने के बाद एक शेर शजरे का पढ़ते हैं जिससे कशायशें बातिनी बहुत होती है।

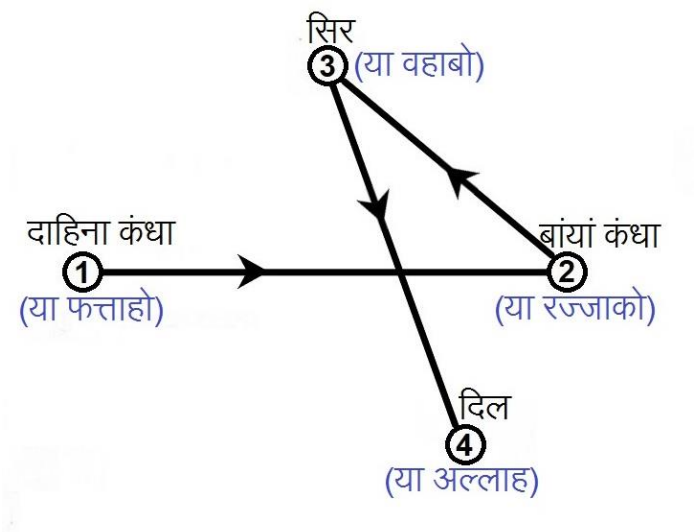

अब मराकिबों का बयान किया जाता है।

जान लेना चाहिए कि सूफियों को इस्तलाह (परिभाषा) में मराकिबा दिल की निगहबानी को कहते हैं। दिल की निगाह रखना

या उसकी चौकीदारी करना यह कहलाता है कि दिल में सिवाय जात परमात्मा के और कोई दूसरा खयाल न आने पाये, क्योंकि इस बात को यह लोग रोग समझते हैं। यह रोग तीन चीजों से दिल में पैदा होता है, जिसकी वजह से परमात्मा के सिवाय और-और ख्याल आते रहते हैं। तीन सूरतें हैं जिनकी वजह से यह मर्ज पैदा होता है, उनमें से एक सूरत यह है कि जिसको हदीस नफस कहते हैं। हदीस नफस शमानी यह है कि संकल्पों का दिल में उतरना। ऐसे संकल्प जो हमेशा अपने मन में सोचने विचारने से - अकेले और जमाअत में अपने इरादे और इख्तियार से आया करते हैं, उनको हदीस नफस कहते हैं। यह मन का खास काम है। दूसरी सूरत को खतरा कहते हैं, यह चित्त का खास काम है। यह खयाल बिला इरादे और इख्तियार के आया जाया करते हैं। इस में सोच और बिचार का दखल नहीं है। तीसरी सूरत यह है कि देखने, सुनने, छूने और चखने से या इल्म से खयालात पैदा होते हैं असली इलाज इस मर्ज का यह है कि अपने अन्तःकरण को जिक्र हक यानी सत के जाप में लगाए रखे। जो खयाल कि अपने इरादे और इख्तियार से आया करते है, उनमें यह करना चाहिए कि बजाए इनके इस्म जात यानी सत नाम को अपने सामने रख लें। अल्लाह और ओम् इस्म-आजम और महामंत्र हैं, इसको जपना चाहिए। जो खयाल कि खतरा है और बिला इरादे और इख्तियार के आते हैं, उनके वास्ते इस्म सिफायत यानी गुण सहित नामों का जाप करना चाहिए, मसलन विष्णु के सहस्त्र नामों में से किसी एक का या महेश या रुद्र के नामों का जाप किया करें, और दिल की नजर गुरु की सूरत पर जमायें, जिसको वास्ता "राब्ता या बरचख कहते हैं। मुलाहिजा मानी मुद्दस का यह मतलब है कि नाम से नामी की पहचान हुआ करती है। अब नाम दो तरह के हैं। एक जाती

दूसरा सिफाती। जाती नाम में नामी के गुण अन्तर्गत बीज रूप रहते हैं। सिफाती नाम में नामी के गुण प्रत्यक्ष और जाहिर जहूर मिस्ल शाख और फूल फल के रहते है। यहाँ पर मानी (बीज रूप गुणों) का ज्ञान किया जाता है, और जौहर और गूदे को साक्षात्कार करने को बतलाते हैं। मुकद्दस और पाक शुद्ध जौहर और मानी का मुलाहिजा करना इसको कहते हैं कि ओ३म् (ॐ) शब्द के खयाल के साथ ही पैदा करने वाला, पालन करने वाला और फिर असल भण्डार में वापिस ले जाने वाले का खयाल आ जावे। इसी तरह लफज अल्लाह का खयाल आते ही खालिक, रब और मालिक यौमिद्दीन का खयाल आ जावे।

पस मुलाहिजा मुकद्दम यह है कि इस्म जात को यानी सत नाम को बिला कैद इबारत और कोश और खसूसियत के अपने जहन में लिहाज रखा करें और हमेशा कल्ब सनोबरी की तरफ कामिल ध्यान रखा करे इस तरह पर काम करने के वास्ते हर आदमी मौजूँ नहीं होता, न हर एक का जहन रोशन और तबिअत तेज हुआ करती है। लिहाजा जिस अभ्यासी को इस तरह पर जैसा कि ऊपर बयान किया गया है ज्ञान न हो सके - तो वह इस तरह पर काम किया करे कि नाम के मानी को एक शुद्ध प्रकाश मान ले- और अपने आपको उस प्रकाश में समाया हुआ और फैला हुआ समझे, गोया कि वह नाम एक प्रकाश का दरिया है और नूर उसका एक कतरा है। या फिर ऐसा समझिए कि उसको शुद्ध अंधकार खयाल करें-और अपने आपको उस का एक खास साया समझे क्योंकि साया जब अंधेरे में आता है तो उस में समा जाता है। कोई भेद बाकी नहीं रहता है।

बाज ज्ञानियों ने इस अभ्यास को इस तरह बयान किया है कि अपने खयाल में गुरु की सूरत को सामने लावे - ताकि हरारत का असर जो अभ्यासियों की एक मुकररह कैफियत हो जाती है - पैदा हो जावे। जब ऐसी कैफियत पैदा हो जाए - तो इसके साथ अपने हकीकत जामा - यानी सूक्ष्म शरीर को अपने गुरु की सूरत मान ले - और उसको अपना गुरु समझे। मगर यह हकीकत जामा यानी सूक्ष्म शरीर जिसको मुसलमान सूफी लोग कल्ब कहते हैं - शरीर में समा नहीं सकता है, और इसका हाजिर कर लेना निहायत ही मुश्किल है। इस वजह से यह तरकीब करना चाहिए कि बायें तरफ सनोबरी टुकड़े की तरफ जिसको आम लोग दिल कहते हैं - तवज्जह करें- और इतनी तवज्जह करे - कि तमाम इन्द्रियाँ एकाग्र और एकसू हो जावें - क्योंकि कल्ब मजाजी और हकीकी यानी पिण्डी और ब्रह्माण्डी मन में ऐसा रब्त और सम्बन्ध हकीकी है कि जिस्म के किसी और दूसरे टुकड़ों में नहीं है। जरूर इस अभ्यास से समाधि अवस्था और बेखुदी सी पैदा हो जायगी। इस बेखुदी को निहायत सीधा रास्ता समझ कर यह खयाल बांधा करे कि इस रास्ते पर जा रहा है और यह रास्ता ऐसा है कि कभी खतम होने पर नहीं आता है। इस रास्ते में अगर कोई खतरा या विश्वास तुम्हारे पीछे पड़ जाए, और तुम उससे भागने की फिक्र करो-लेकिन भागने पर भी वह खयाल और खतरा दूर न हो, तो फिर मुर्शिद की सूरत यानी सूक्ष्म शरीर को अपने सामने लावे। अगर इससे भी दूर न हो - तो दिमाग को खाली करने की फिक्र करे - और वह इस तरह पर कि नाक के रास्ते से निहायत जोर से सांस को निकाले और फिर उसी हालत की तरफ मुतवज्जह हो - और अगर इसमें भी न जाए - तो इस्म या खयाल को उसके मानी समझ कर पढ़ता रहे। इसका पढ़ना बहुत

तासीर इस मामले में रखता है। अगर इससे भी न जाए-तो जो ख्याल आ रहा है उसको मजबूत पकड़ कर नाभि के ऊपर से धुएं की शकल में लेकर ऊपर को उठा कर सर की चोटी तक ले जाये, और फिर दाहिने कंधे की तरफ उस धुएं को ले जा कर पीठ की तरफ फेंक दे और दिल पर जो बाईं तरफ है - सांस जो रुकी हुई है छोड़ दे - छोड़ते वक्त अल्लाह या ओ३म् की ठोकर दिल पर लगावे। ऐसा कई मर्तबा करे। अगर इससे भी न जावे तो लापरवाह हो जावे, और उसको आने दे - और किसी किताब के देखने या गाने में मशगूल हो जाये - या और कोई घर का कम करने लगे और शगल को उस वक्त छोड़ दे। अक्सर देखा गया है कि उससे फायदा हो जाता है।

तमाम इन्द्रियों और अन्तःकरण में जो चीज आवेगी – वह दो हाल से खाली नहीं है-एक तो अगर मुताबिक वाकया (Fact) के है - तो बह सत होगी। और अगर मुताबिक वाकया (Fact) के न होगी तो झूठ होगी। एक फिरका वहदत बजूदियों का है - उनके नजदीक यह है कि सब जीव ब्रह्म हैं-और जो कुछ है वह सब ब्रह्म है। इसलिये इन लोगों के यहाँ यह मान लिया गया है कि जैसे सत पदार्थ सत ही के अद्वैत रूप हैं - वैसे ही बाज असत पदार्थ भी - उसी सत ही के अद्वैत रूप हैं। इसका यह मतलब हो सकता है, कि सत और असत सब उसी से निकले और उसी के दो रूप हैं। इसलिए असत चीजों और माया का इनकार भी नहीं हो सकता - और इनका भी हक अदा किया जाता है।

सत कभी-कभी इन्सानी सूरत में भी जाहिर होता है - जैसा कि हजरत मुईउद्दीन जुनेदी फरमाते हैं कि **"फलहक्को मद्दे नजर**

फी सूरतों व युनकिरुल जाहिलों की दाना जाहिल और नादान लोग इससे इनकार करते हैं इसलिए जो कुल्लियात और जुजबियात नफस में मुदरिक हों, उसमें वजूद मुतलक को एक शान खासके साथ मुताला करे।" इसका मतलब यह है कि अपनी आत्मा में जो कुछ नजर पड़े - चाहे वह कुल हो या अंश - सब को इस तरह मौका और जगह के लिहाज से देखे कि सब के हक अदा हो जायें। असल जब है तो उसकी नकल भी है - जात जब है तो उसकी सिफात भी है। नेकी, बदी, रोशनी, अन्धकार गरज कि जो कुछ है वह सब उसी से है - और सबके पैदा और जाहिर होने में कुछ मसलहत भी है। ज्ञान और विज्ञान यह है कि हर एक चीज की मसलहत से वाकिफकारी हो जाए - और फिर अपने-अपने मौके पर हर चीज का मुनासिब स्तैमाल करे। तो अब बुज़ुर्गों का सह मशवरा है कि अगर निराकार है, तो साकार भी है। निराकार के मानने वाले साकार से भाग कर कहीं जा नहीं सकते - और अपने मौक़े पर साकार के साथ व्यवहार करते हैं - और करने पर मजबूर हैं। यह दूसरी बात है कि वह हठ से जबरदस्ती बात न मानें। इसलिये यह जो कहा है कि सत कभी-कभी सूरत इन्सानी में जाहिर होता है, गलत नहीं है और उस वजूद मुतलक को एक शान खास से देखना चाहिए।

अगर किसी को कोई बुरा खतरा या ख्याल आता है तो उसको यह समझना चाहिए कि बुरा और अच्छा सब उसी सत से ताहिर हो गये हैं। सिर्फ तमीज कर लेना हमारा काम है कि सत यह है और असत वह है। सत और असत के साथ एकसा व्यवहार कर लेना नादानी और अज्ञान है। आत्मा सिर्फ सत और असत का

तमीज करती है। पस तमीज करने वाली चीज खुद कोई बुरी और अच्छी नहीं है। बल्कि तमीजके सामने जो सत और असत के नजारे मौजूद हैं वह दूसरी चीजें हैं। अगर उसके साथ बर्ताव, तमीज के साथ हा तो कोई बुराई नहीं। अगर ख्यालात न आया करें तो अच्छे ख्यालात की तमीज किस तरह हो सकती है। अब लाजिम यह है कि बुरे ख्यालात और खतरों के दांव और पेंच में न आकर अपने आपको बरबादी से बचाना चाहिए। इसलिये ख्यालात दूर करने का तरीका बहुत अच्छा है कि जब बुरे ख्याल खतरे आयें - तो उसमें सत का प्रकाश मुलाहिजा करे। और अच्छे आवें तो उनमें भी सत का प्रकाश देखे। बुरे ख्यालात से घबराने की जरूरत नहीं है। सिर्फ शास्त्र और धर्म शास्त्र की हिदायत के मुताबिक - सत और अच्छों को ग्रहण और बुरे और झूठों का त्याग करना चाहिए। अगर यह तरकीब खतरों के रोकने की करेगा, तो एक अजीब कैफियत बेखुदी और जौक की पैदा होगी। इसी तरह के ज्ञान में वजह और मंजिलें और तरतीब दुनियां की पैदायश की मालूम होने लग जायेंगी।

यह जो बतलाया गया है कि हर चीज को और खयालात को चाहे वह बुरे हों या अच्छे हों - उसमें सत का प्रकाश देखने का अभ्यास करो। अब यह बात इसमें और जियादा अच्छी बतलाई जाती है कि इसे देखने की भी नफी कर डाले - यानी यह समझे कि मैं जो कुछ देखता हूँ - वह कुछ नहीं देखता। इसका मतलब यह है कि अच्छी और बुरी दोनों की याद भूल जाए - और अपनी उस तमीज की शक्ति को छोड़ कर उस कैफियत बेखुदी को इख्तियार करे और बेहोशी का दामन खूब मजबूत पकड़े क्योंकि इस तरीके के बुज़ुर्गों में और उनके मजहब में इस बेहोशी से निकलना कुफ्र और

बुरा समझा जाता है। वह कहते हैं कि बेखुदी और बेहोशी हैरत की शुरूआत है - और सब मुकामों का आखिर है। इसी कैफियत को बह बुजुर्ग जो वहदत शहूदी रखते हैं - आखिरी मुकाम नहीं मानते हैं - बल्कि दर्मियान का मुकाम मानते हैं जो शुद्ध अहंकार का मुकाम है। वहदत वजूदी वाले अहमब्रह्मास्मि वाले हैं जो हर एक दुनियाँ की चीज को ब्रह्म समझते हैं - अद्वेतवादी कहलाते हैं। वहदत शहदी वाले बुजुर्ग विशिष्ट-द्वैत वाले हैं - जो दुनिया की हर एक चीज को ब्रह्म से जाहिर हुआ समझते हैं। फर्क सिर्फ बात की बात का है। सुषुप्त अवस्था वहदत वजूदियों की है। तुरिया अवस्था वहदत शहूदियों की है।

पंथाई को चाहिए कि अपने दिल की आँख अपने हकीकत जामे - (ब्रह्माण्डी मन) को देखे - और चरम दिल यानी तीसरी आँख से इसको अनुभव करे। दिल की आँख के सामने हर हालत और हर कर्म को रखे। अभ्यासी अपने ब्रह्माण्डी मन को - जो कुछ दुनियाँ में पैदा है चाहे वह नेक हो - चाहे बुरा चाहे वह इन्द्रियों से जाना जा सके और चाहे न जाना जा सके - सब में देखेगा। यहाँ तक की तमाम दुनियाँ को अपने में कायम देखेगा - और जितनी चीजें इस दुनियाँ में मौजूद है उन सब में अपने आप को भिदा हुआ पायेगा। जितनी बातें कि मन, बुद्धि और इन्द्रियों की है - वह सब आइने मालूम होंगे - और इन आइनों में अपने सूक्षम शरीर को देखेगा। ऐसा मालूम होगा कि तमाम दुनियाँ जिस्म की तरह पर है और अभ्यासी उनकी रूह और आत्मा है। सूफियों की इस्तलाह और परिभाषा में इस हालत का नाम उमीउलजमा है। जब यह मराकिबा कवी हो जायगा - यानी यह समाधी परिपक्व हो जायेगी तब रंज और खुशी की सब बातों को

पहिले से जान जाया करेगा - क्योंकि रूह का अपनी खुशी और रंज की बाबत जनना जरूरी है। एक तरह का मराकिबा यह है कि लाइलाहइललल्लाह या इस्म जलाल हू की लिखी हुई सूरत को अपनी आँख के सामने या ज्ञान के सामने कागज या खयाल के तख्ते पर - जो आँखों सामने मौजूद है- पढ़ता रहे और हमेशा इसी सूरत का खयाल रखे - उस वक्त तक कि बेहोशी हो जाए - और वह शक्ल बिल्कुल भूल जाए - यहाँ तक कि भूलने का खयाल भी भूल जाए।

पत्थर, मिट्टी का ढ़ेला, कब्र, आइना, फूल, मुर्शिद, माशूक़ के चेहरे या किसी चीज की तरफ - आँख और नजर इस तरह लगाए कि पलक न झपके - और अपने अन्तःकरण को - उस सत - आधार की तरफ - जिस का कि कोई रंग-रूप-और नाम नहीं है - लगावें - यहाँ तक कि संकल्प विकल्प के रास्ते बन्द हो जाएं - और बेहोशी के आसार पैदा होने लगे और हर चीज से गाफिल इस दर्जे हो जाए कि अपनी गफलत की खबर न रहे।

बाज बुज़ुर्गों ने यह फरमाया है कि परमात्मा की तरफ इस तरह से तवज्जुह को जमाए कि तफर्रुकात मुख्तलिफा से कुबाए कुल्लिया और जुजिया और जाहिरिया और बातनिया को बेकार और हर इल्म और एतकाद - बल्कि मासिबा अल्लाह के - दिल को खाली करके हजरत हक सुभान ताला की तरफ - जैसा कि वह फिलवाकै है - बिला कैद तनाजिया और तशबिया के तबज्जुह करे।

दुनियाँ की चीजों और जुमले किस्म के तअल्लुकात जिन्होंने कि दिल को अपनी तरफ खींच रखा है - तर्फरुकात

मुख्तलिफा कहते हैं।

जिस्म के अन्दर, दिल, दिमाग, जिगर. आँख, नाक, कान वगैरह को कुवाए कुल्लिया कहते हैं। बाकी और सब जोड़ों वगैरह को कुबाए जुजिया कहते हैं। जिस्म के दो हिस्से जहाँ आत्मा और प्राण शक्ति केन्द्र (मरकज) बना कर काम कर रहे हैं बह कुबाए कुल्लिया हैं। जो उनके आधार और सहारे पर काम कर रहे हैं - वह कुबाए जुजिया हैं। स्थूल और सुक्षम शरीरों को जाहिरी और बातिनी कहते हैं।

हर तरह के ज्ञान को इल्म और हर तरह के विश्वास को ऐतकाद कहते हैं। दुनियाँ की जितनी चीजें हैं - चाहे वह दिखलाई पड़ें या न पड़ें वह सब परमात्मा के सिवा हैं। इन सब चीजों में दिल को खाली कर देना चाहिए - बस सिर्फ एक लक्ष्य की याद हो।

अब लक्ष्य कैसा हो कि उसमें कैद जमाल और जलाल दोनों की न हो। ब्रह्म के दो रूप और दर्शन हैं एक विश्व रूप दर्शन है - दूसरा आत्म रूप दर्शन है जिस को महतो महीयान और अणो अणीयान भी कहते हैं - इन्ही दोनों को तनजिया और तशबिया कहते हैं। तनजिया वह रूप और दर्शन है कि जिसका नाम रूप रंग वगैरह कुछ नहीं है। जहाँ देश काल वस्तु कुछ नहीं है। तशबिया वह आलम है जिसकी मिसाल दी जा सकती है - और नाम रूप वगैरह भी कायम किया जाता है। यहाँ कारण सूक्ष्म और स्थूल की जगहें मुकर्रर की जाती है।

यहाँ पर उन तवज्जुह की तरफ ध्यान दिलाया गया है कि

उस लक्ष्य की याद रखें कि जिसका नाम रूप रंग वगैरह कुछ नहीं है।

फिर कहते है कि तवज्जुह करे ऐसी इजमाली-ह्वैलानी-उल्फुका के साथ - जिसमें हर किस्म के सूरे हस्ना हो - या कबीहा महूसा हो - या गैर महूसा के काबिलियत हो। एकसूई और दिल जमई पुख्तगी और कामिल इखलास के साथ हमेशा बिला फितूर और परेशानी के इसको करता रहे।

अगर ऊपर लिखी हुई तवज्जुह न कर सके तो यह करे कि कारण और सूक्ष्म रूप गुण जो परमात्मा के हैं उनका खयाल बाँधे - यह गुण शुद्ध रूप अव्यक्त (हालत खफी) के रूप रखते हो - चाहे व्यक्त रूप यानी हालत जहूर के हों - और फिर चाहे ऐसे हों कि इन्द्रियों और मन बुद्धि वगैरह से जाने जा सकते हों - या मन बुद्धि और इन्द्रियों से परे के हों। इसका यह मतलब है कि वह अपरा प्रकृति के मुतअल्लिक हों - चाहे परा प्रकृति के मुतअल्लिक हों। इन दोनों में से एक तवज्जुह एकाग्रता और दिलजमई और अटल वृत्ति और धारना के साथ इस तरह करता रहे कि उसमें फितूर (Gap) और परेशानी न हो।

सालिक को मुनासिब है कि अपने सैयदाइ मरातिब तजल्लियात से - मुन्तहाए मरातिब तजल्लियात तक मुलाहिजा करे - और इस मुलाहिजा को अपना मद्दे नजर रखे - पस न देखे।

"वजूद मुतलक व वजूद मुकैयद"-एक वजूद हकीकी मन व चित्त है - जो दोनों किस्म में एक ही है - और मुतलक व मुकैयद महज एतबारी और निस्बती है - और इस मुलाहिजे पर मदादुमत

करना जोक कसीर होने का बाअस है। पंथाई को चाहिए कि वह अपने शुरू-शुरू के प्रकाशों के दर्जों के निगाह करके आखिरी दर्जे के प्रकाशों का मुलाहिजा करता रहे - और इस मुलाहिजा करते रहने को अपना इष्ट बना लेवे - या इसको पोइन्ट आफ विऊ Point of View कायम कर लेना चाहिए।

इसका इस तरह पर मुलाहिजा करे कि सिवाय वजूद मुतलक और वजूद मुकैयद के कोई चीज दुनियाँ की न देखे।

वजूद मुतलक से मुराद यहाँ वह चीज है - जो बिला किसी के सहारे खुद हरकत में है। वजूद मुकैयद वह जिम है - जो दूसरे के सहारे से हरकत और काम करता है।

फिर कहा गया है कि यह दोनों किस्म के जिस्म एतबारी और निस्बती हैं यानी जब एक से दूसरे को अलहदा करे और तमीज करे तब दो मान लिए जाते हैं - वर्ना है एक ही। पस अगर पंथाई और अभ्यासी इस अभ्यास को हमेशा करेगा तो बहुत जौक (लगाव) पैदा होगा। "एक शगल यह है कि दोनों आँखें बन्द करके अपने दिल पर नजर रखे-और हक ताला को हाजिर-नाजिर (देखने वाला) और अपने साथ जाने। दूसरा शगल यह है कि दोनों आँखें खोले रहे - और नजर ऊपर या सामने रखे - और इस बात का लिहाज रखे पलक बन्द न हों। इस शगल से कुछ अनबार - प्रकाश जाहिर होते हैं और पलक से आग भड़कती है - और तमाम जिस्म में फैलती है - और इश्क पैदा होता हैं।

मुकाम नसीरा का शगल (अभ्यास) यह है कि दोनों आँखें

खोले रहे - और नजर नाक के सिरे पर रखे - और इस तरह जमाए कि दोनों आँखों की स्याही गायब और सफेदी जाहिर हो जाए और दिल ठहर कर चित्त की वृत्तियाँ बन्द हो जाएं - इसको शगल नसीरा या नासाग्र ध्यान कहते हैं। बैठक (आसन) चाहे जिस तरह रखे - नमाज की तरह या कुत्ते की तरह - इख्तियार है।

अगर अपनी नजर भौओं के दर्मियान जमाए - और जैसा ऊपर लिखा गया हैं - शगल करे - तो इस शगल को मुकाम महमूदा यानी भृकुटी ध्यान कहते हैं।

योंगियों ने 84 चौरासी आसन बयान किए हैं उनमें से एक आसन जो सब में मिल हुआ है - शेख बहाउदीन कादरी कुद्दस सर्रहू ने इख्तियार कर लिया है। वह यह है कि मरब्बा चारों जानू बैठे - और दोनों पाँव इकट्ठे करे। बाएं पांव की एड़ी अण्डकोश खुसतिन के नीचे रखे और दाहिना पांव उसके पास रखे। उनके बाद कूल्हे रखे और सांस ऊपर खींचे और नाफ़ (नामी) को पीठ की तरफ समेटे - और मुँह बन्द करे। जबान तालू से चिपका ले। उसके बाद बहम में मशगल हो यानी दिल में फिक्र करे कि वो ही है। भूखा रहे और सोना छोड़ दे। अगर तीन रोज मुतवातिर बिला खाए और सोए - इसी शगल को करता रहे - तो उस पर ऐसी बेखुदी - और बेहोशी तारी होगी - जिस में कि गैब के पर्दे उस पर खुल जाएंगे। या तो वह शख्स होश में आजायगा या मजजूब हो जायगा। अगर पहिले तीन रोज में यह कैफियत न हो तो फिर उसके बाद मुत्तसिल और तीन दिन करे और हर तीन दिन के दर्मियान में किसी कदर खा पी ले और सोए - वर्ना बिल्कुल सौदाई हो जायगा - और पागल की तरह हो जायगा।

नोट - बराह मिहरबानी कोई साहब इस शगल को न करें - यह पहिले के आदमियों को ताकत थी अब नहीं है।

एक सूरत मराकिबा की यह भी है कि नमाज की बैठक बैठे और अलीम समीअ और बसीर को शेख की सूरत के साथ मुलाहिजा करे और हर हाल का इंतजाम करे। जब इनमें मुस्तकीम हो जाए तो उसी हैय्यत पर बैठे और दिल की जानिब रूमाइल करे। आँख बन्द करके बातनी आँख से दिल की तरफ देखे और खुदा के देखने का तसव्वुर करे। फिर जब इसमें मुस्तकीम हो जाए तो उसी बैठक पर बैठे और आसमान की तरफ नजर करे और साहब नजाअ की तरह आँख बन्द करके तसव्वुर करे कि रूह कालिब से निकल कर आसमानों के ऊपर पहुँची और हक ताला को देखने लगी। **अगर कोई इस पर मुन्तकीम हो जाएगा तो एक सब्ज धागा जाहिर होगा - जिसका एक सिर सातवें आसमान के ऊपर और दूसरा उस के दिल में होगा। यह फिक्र का आला दर्जा है। इह शगल को शेख छुपाए रहते हैं।** इसमें शेख की सूरत का मुलाहिजा दुरुस्त नहीं है।

पहिली सूरत को मराकबा - दूसरी सूरत को मुशाहिद और तीसरी सूरत को मुआइना कहते हैं। हजरत शेख नसीरुद्दीन चिराग देहलवी कुद्दसर्सरहू ने इन अशगाल को हजरत सुल्तानजी निजामुद्दीन कुद्दसर्सरहू से नकल किया है।

अलीम यानी जानने वाला - समीअ यानी सुनने वाला बसीर यानी देखने वाला। शेख के मानी अपने गुरु के हैं। इल्तजाम के मानी लाजिमी तौर पर इख्तियार कर लेना - मुस्तकीम के मानी ठहर

जाना यानी स्थित हो जाना - हैय्यत के मानी शकल के हैं। रू के मानी मुँह के हैं। साहब निजाअ के मानी वह अदमी जो मर रहा है। बातिनी आँख से मुराद दिल और अन्दर की आँख। कालिब के मानी जिस्म के हैं। मराकिबा को समाधी कहते हैं जिसमें ध्येय को निगाह रखते हैं। सम अवस्था-एतदाल की हालत होती है एक लक्ष्य यानी Ideal कायम रहता है और सामने रहता है दूसरा नहीं आता। मुशाहिदा के मानी साक्षात्कार करने के हैं - जिसमें यह यकीन हो जाता है कि मैंने इसको जान लिया है, कि जरूर यही है जिसके वास्ते तलाश और कोशिश थी। मुआइना के मानी ऐन हो जाना - जिसको देखना था बह ही हो जाना।

हजरत मीर सैयद मुहम्मद गेसू दराज अलीउलरहमत से मनकूल हुआ है कि साकित रहे - यानी ज्यों का त्यों रहे और यह सोचा करे कि मैं नहीं हूँ। जो कुछ है वह ही है। यह रास्ता बहुत नजदीक है। जो शख्स मराकिबा और अल्लाह के जिक्र में मशगूल होगा - तो सारे आलम की उस पर तजल्ली होगी। लड़कपन से मरने तक ह० सुल्तानुल आरफीन (हजरत बायजीद बस्तामी) को यही शगल रहा है। मराकिबा मैराजुल आरफीन में यह बयान है कि दुनियां के तमाम मौजूदात को अलग-अलग आइने खयाल करें - और जा कुछ उसमें कमालात महसूस (इन्द्रियों से जानने वाली बातें) और माकूला (अकल और दलीलों से) मालूम होने वाली बातें देखे उनको हक ताला के अस्माए और सिफात की सूरत बल्कि तमाम आलम को एक आइना फर्ज करके उसमें हक ताला को मय अस्माए सिफात के देखे तो जरूर अहल मुशहिदा से हो जायगा, जैसा कि पहिले अहल मकाशिफा अनुभव वालों में से

था। **जब यह शगल खतम कर ले - यानी पूरा काबू इस पर हो जाए तो फिर इसके ऊपर चलना चाहिए यानी इस तरह पर खयाल बांधना चाहिए कि जब तुम यह जानते हो कि तुम्हारी जात सब को घेरे हुए है और सब कुछ तुम में नक्श है इस लिए तुम इस सबके आइना हो। पहिले तो तुम हक सुभान ताला को दूसरों में देखते थे और अब अपने आप में देखते हो - तो अब इसके आगे भी चलो। यानी जिस कदर मुमकिनात हैं उनको मादूम जान कर उनको दरमियान से निकाल डालो और सब को तजल्लियात हक की सूरत देखो यानी सत का प्रकाश मुलाहिजा करो और सत (हक) में कायम समझ लो। लिहाजा अब जो कुछ उसमें देखोगे वह कमाल और जमाल हक सुभान ताला का होगा। अब इसके बाद भी आगे चलकर अपने वजूद को मिटा दो - इसलिए अब जो कुछ जानोगे और देखोगे - हक ताला ही को जानोगे और देखोगे। वह ही शाहिद और वह हो मशहूद है - यानी वह ही देखने वाला है और वह ही देखा जाता है।**

सिलसिला आलिया नक्शबंदिया में सलूक बुनियाद तीन तरी पर रखी गई है।

1. **पहला तरीका तवज्जह और मराकिबे का है यानी दवाय जिक्रे कल्बी।**

2. **दूसरा शगल राबता यानी तसव्वरे शेख यानी गुरु की शकल सामने रखना बादहू गुरु की शकल अपने को जानना।**

3. जिक्रे तहलील - ला इलाहइलालल्लाह - शगल नफी असबात हो जरबी या चहार जरबी।

शब्दार्थ

सालोकता - सत्य-लोक
सारूपता - सत्यस्वरूप
बका - शेष,अधियज्ञ
फी अल्लाह - भक्ति, अतिकृपा
तमकीन - मकान वाला
सलूक - व्यवहार
मुशाहिदे - दृष्टिगोचार
उनवान - भूमिका
ताज्जुब - अचम्भा
मतरूद - उद्यत
सुन्नत - धर्म शास्त्र
सुन्नत जुवाबदस - धर्म शास्त्र व्यवहारी
जिक्र - जाप
उन्स - प्रेस
इत्तल - पठन
तसबीह - माला
अमारात - वस्तु
तजमीम - उपाय
सामीपता - इष्ट के निकट
सायुज्जता - सत्य स्वरुपमें मिलाप
इब्बी अल्लाह - प्रारम्भिक ईश्वर भक्ति
इतलाक – सम्बन्ध
तलयून - बिला मकान वाला
सालिक – पन्थाई
कश्फ - आन्तरिक बात को जानना
मुस्तहकिम - स्थिरिता
मुकद्दम - मुख्य
फतहयार - मित्र की सलाह
मोकदा - विश्वासी
कल्मातोहीद - एक नाम
फिक्र - विचार
मुस्तौर - तैयार
तिलावत - पाठन
वजीफा - जाप
इशारात - संकेत
मौहुम - फानी (नाशवान)
फनाउलफना - लय-प्रलय
बकाउलफना - अधियज्ञता
मुखिल - रुकावट डालने वाला
मशायज - मसलहतन
हजूरदायमी - सदेव आनन्द
बरकत - प्रतिष्ठा
हजूरखल्क - जगतानन्द
लतीफारुह - आत्मा का चक्र
लतीफा खफी - गुप्त चक्र
वजूद - होने के
सुरत - हृदयानन्द, आदिमाया सत
जिक्र अखफी अखफी – कंठ चक्र

मुतमैयन - इत्मीनान के साथ
बातिन – आंतरिक
मुकीम – स्थिति
इस्तहकाम – ठहराव
जबरुती – मायावी
तजल्लीजाती- आत्मिक प्रकाश
अजवी – आकाशी
मोअइन – मददगार
मुरज्जा – ध्येय
जिक्रसिर - शेष ध्यान
अजल – आकाशवाणी
हजूरहक – सत्यानन्द
लतीफाकल्ब - हृदय चक्र
लतीसर - शेष चक्र
लतीफाअखफी - प्रगट चक्र
जिक्रखफी - गुप्त जाप
सबात – पुण्य
तहारत – शुद्धता
माजूब - करने वाले, असर कबूल वाले
तनकीआ बातिन – आंतरिक शुद्धता
नफीअसबात – निषेध
आरिफ – ज्ञानी
तजल्ली सिफाती – मायावी प्रकाश
रब्त- अभ्यास
सर मुहकम - विशेष स्थिति
तसफियाकलब - हदय की शुद्धता
गैवत - आकाशी
महबियत - तन्मयता
अहदियत - प्रभु भक्ति
सुभान ताला - सगुण प्रभु
हादिस - उतरा हुआ
मंसूब - ध्येय
असबात - माननीय विधि
फ़नाएफनी - लय-प्रलय
अरफान - अज्ञान
नफी - निषेध
जिक्र अखफी - कंठ के नीचे छाती के ऊपर
तहकक - सत्य
मराकिबा - समाधी
अलकाल - बुद्धि, अभ्यास
मुकाशफात - दृश्य, अन्दर
तजकियानफस - मनकी शुद्धता
बेखुदी - अपनत्व रहित
फना - लय
हकताला - निराकार प्रभु (निर्गूण प्रभु)
इदराक – अनुभव
मुकतजा – दौर
मसूब इलहा – ध्याता
अदम – अदृश्य
शहूद - बलिदान होने वाला
सानी - दूसरा, समानता
बातिल – असत

अध्यास - शरीर का ज्ञान
नुकसुल अमर - दूषित पदार्थ
निगेटिव – निषेध
सनहत - सम्यक ज्ञान
मुकदम – वशेषता
स्तैदाद – शक्ति
अल्लाह - ओ३म्
खलिस - दूर होना
या रज्जाक - ऐ जगत्पालक
या अल्लाह - ऐ ओ३म्
जुजवियात – क्षर
वहदत शहूदी - एकत्वता पर मिटना
तफरकात मुखतलिफा – मानसिक विघ्न
कुवायेकुल्लिया – शक्तिमान इन्द्रियाँ
तनकिया – भूल
मुहतमका – सांसारिक
महीयान - रहने वाला
ह्वैलानी - प्रकाशित
सूरहस्ना - शुद्धताई के चिन्ह
मुस्तहये - अखीर (उच्चतम)
मदादुमन - भरोसा
इतजाम - देखे
साद्दबेनजाअ - मौत के वक्त
हू - ॐ
बसूसे - दिल के उभार
या फताहो - ऐ जगत पिता
या वहाबो - ऐ सर्व शक्तिमान
कुल्लयात - अक्षर
मुदरिक -अनुभवी
इस्मजलाल हू - दीप्यमान
नशियां - चूक
जमाल - अन्तर
अजमाली - आत्मिक
उल्मुल्का - अध्यात्मिक
मरातिब तजल्लिया – प्रारंभिक प्रकाश
मुकैयद - बंधन
निसबती - सम्बन्धित
समहियत - विधि
मुआइना - ऐनहोना
मादूम -अदृश्य
बैत - दीक्षा